शब्दकोश (Dictionary)

नीतिशास्त्र (Ethics): नीतिशास्त्र वह नियामकीय/आदर्श मूलक विज्ञान (Normative Science) है जिसमें सामाजिक जीवन व्यतीत करने वाले सामान्य मानव के ऐच्छिक कर्मों (आचरण) के उचित या अनुचित होने का निर्धारण किया जाता है। साथ ही यहाँ उचित और अनुचित के निर्धारण के आधारों या मानदण्डों की विवेचना की जाती है ताकि व्यक्तिगत हित एवं सामाजिक हित में सामंजस्य बना रहे तथा सुखद मानवीय जीवन की प्राप्ति हो सके। नीतिशास्त्र का संबंध 'चाहिए' से होता है।

Ethics (नीतिशास्त्र) एवं Morality (नैतिकता): 'इथिक्स' एवं 'मोरालिटी' दोनों परस्पर संबंधित अवधारणाएं हैं। इन्हें एक-दूसरे से पूर्णतः पृथक करके नहीं समझा जा सकता है। दोनों में मानव के आचरण, करणीय-अकरणीय, उचित-अनुचित, अच्छा-बुरा, सही-गलत आदि की चर्चा होती है। फिर भी दोनों में कुछ अंतर है।

नीतिशास्त्र एवं नैतिकता में अंतर (Difference between Ethics & Morality):

क्र. सं.	नीतिशास्त्र (Ethics)	नैतिकता (Morality)
1.	अंग्रेजी का 'इथिक्स' (Ethics) शब्द ग्रीक शब्द 'इथिका' (Ethica) से निकला है जो स्वयं 'इथोस' (Ethos) से व्युत्पन्न है, जिसका आशय चरित्र से है। इस रूप में नीतिशास्त्र मानव के चरित्र एवं आचरण का अध्ययन है।	अंग्रेजी का 'मोरल' (Moral) शब्द लैटिन भाषा के 'मोरेस' (Mores) से व्युत्पन्न है जिसका आशय रीति-रिवाज, परम्परा आदि से है।
2.	इथिक्स में मानव के आचरण विषयक विभिन्न नैतिक सिद्धांतों की विवेचना की जाती है ताकि उनका उचित या अनुचित के रूप में निर्धारण हो सके।	वहीं व्यवहार के स्तर पर मोरालिटी (नैतिकता) की स्थिति उभरती है।
3.	इथिक्स में क्षेत्र विशेष के संदर्भ में सार्वभौम नैतिक मापदंडों, मूल्यों एवं आदर्शों का निरूपण होता है। जैसे- मीडिया इथिक्स, पर्यावरणीय नीतिशास्त्र, प्रशासकीय नीतिशास्त्र आदि।	जबकि नैतिकता में व्यक्तिगत स्तर का भाव (Elements of subjective preference) होता है। नैतिकता के मानदंड निर्धारण में स्वयं व्यक्ति की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। इस रूप में नैतिकता में उचित-अनुचित के संबंध में व्यक्ति के द्वारा स्वीकृत विशेष मूल्यों, विश्वासों एवं मान्यताओं की प्रधानता होती है। इसी कारण एक व्यक्ति विशेष के लिए कोई कर्म, विचार या विश्वास नैतिक हो सकता है, तो दूसरों के लिए अनैतिक।

4.	इथिक्स (नीतिशास्त्र) को अध्ययन के एक विषय एवं आदर्शमूलक विज्ञान के रूप में स्वीकार किया जाता है, जहाँ नैतिक मापदंडों एवं आदर्शों का निरूपण होता है एवं उनके आधार पर मनुष्य के कर्मों का मूल्यांकन किया जाता है। इस क्रम में नैतिक प्रत्यय जैसे- उचित-अनुचित, कर्त्तव्य, अधिकार, दंड और पुरस्कार, नैतिकता की मान्यताएँ, नैतिक निर्णय का स्वरूप आदि का भी अध्ययन किया जाता है।	नैतिकता को विषय के रूप में न मानकर व्यवहार के औचित्य-अनौचित्य, करणीय-अकरणीय आदि के रूप में देखा जाता है।

पॉटर स्टीवर्ट (Potter Stewart) के अनुसार- 'आपकों क्या करने का 'अधिकार' है तथा क्या 'सही' है, के बीच का अंतर जानना ही नैतिकता है।' ("Ethics is knowing the difference between what you have the right to do and what is right to do")। जैसे- संविधान हमें अधिकार प्रदान करता है तथा कुछ कर्त्तव्यों की अपेक्षा भी करता है परन्तु सदैव संविधान और कानून के अनुसार कार्य करना ही उचित नहीं हैं बल्कि कभी-कभी इसके विपरीत कार्य को भी सही माना जा सकता है जैसे- घायल व्यक्ति को बिना हेलमेट पहनाये मोटर साइकिल से हॉस्पिटल पहुंचाना या आपदा आदि के समय अपने विवेक से तत्काल कदम उठाकर लोगों की जान-माल की रक्षा करना, भले ही इस क्रम में कानूनी प्रक्रिया एवं मापदण्डों का उल्लंघन हो जाये। स्पष्ट है कि जो कुछ करने का अधिकार नहीं है, वह भी कभी-कभी सही हो सकता है। पुनः केवल अधिकारों का कठोरता से प्रयोग करना ही उचित नहीं बल्कि इसके प्रयोग के क्रम में कमजोर एवं असहाय वर्ग के प्रति सहिष्णुता, समानुभूति एवं करुणा का भाव भी आवश्यक है।

नीति का आशय (Meaning of Neeti) : नीति का शाब्दिक अर्थ है- ले जाना। यहाँ इसका आशय समाज एवं व्यक्ति के आचरण को, उचित एवं अनुचित के विभेद ज्ञान के माध्यम से, कुमार्ग से सन्मार्ग अर्थात् कर्त्तव्य के पथ पर ले जाना है। इस मार्ग पर चलकर ही व्यक्तिगत हित और सामाजिक हित में सामंजस्य की स्थापना तथा सुखद मानवीय जीवन की प्राप्ति संभव है।

उचित एवं अनुचित (Right & Wrong): नैतिक नियमों के अनुरूप कर्म करना उचित है एवं उनके विपरीत कर्म करना अनुचित है। नैतिक नियमों का लक्ष्य शुभ की प्राप्ति है। इस रूप में शुभ की प्राप्ति में जो कर्म सहायक है, वह उचित है और जो इसमें बाधक है वह कर्म अनुचित है।

शुभ (Good): शुभ का शाब्दिक अर्थ है- जो लक्ष्य या उद्देश्य की प्राप्ति में सहायक है। शुभ के दो प्रकार है- (a) सापेक्ष शुभः सापेक्ष शुभ ऐसा शुभ है जो किसी लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक होता है। इस रूप में शुभ साधन रूप है। सापेक्ष शुभ अपने आप में मूल्यवान नहीं होता है। (b) निरपेक्ष शुभः यह अपने आप में शुभ होता है।

निरपेक्ष शुभ (Absolute Good) : निरपेक्ष शुभ अपने आप में शुभ एवं अंतिम लक्ष्य है। यह स्वयं साध्य है, इसे किसी उच्चतर लक्ष्य की प्राप्ति का साधन नहीं बनाया जा सकता क्योंकि इससे उच्च कोई दूसरा आदर्श नहीं है। सुखवादियों के अनुसार सुख जीवन का सर्वोच्च शुभ है। इनके अनुसार सुख ही शुभ है। G.E. Moore के अनुसार, शुभ नीतिशास्त्र का मौलिक प्रत्यय है। शुभ का प्रत्यय एक सरल प्रत्यय है। यह अपरिभाष्य है। इसका ज्ञान अंतः प्रज्ञा (Intuition) से होता है। शुभ के आधार पर ही अन्य सभी नैतिक प्रत्ययों की व्याख्या की जा सकती है।

संकल्प की स्वतंत्रता/इच्छा-स्वातंत्र्य (Freedom of Will): काण्ट मतानुसार संकल्प की स्वतंत्रता नैतिकता की एक महत्वपूर्ण आधारभूत मान्यता है। अपनी इच्छानुसार किसी कर्म को करने या न करने की स्वतंत्रता ही संकल्प की स्वतंत्रता है। जिस कर्म को करने में व्यक्ति स्वतंत्र हो, वही कर्म नैतिक

निर्णय का विषय हो सकता है। जो कर्म बाह्य दबाव या भय आदि के कारण किया जाए, उसको नैतिक दृष्टिकोण से उचित या अनुचित नहीं कहा जा सकता है। व्यक्ति के ऐच्छिक कर्म ही नैतिक निर्णय के विषय है। ऐच्छिक कर्म इच्छा-स्वातंत्र्य के अभाव में असंभव है। इसीलिए, मार्टिन्यू का कहना है- "या तो इच्छा-स्वातंत्र्य सत्य है या नैतिक निर्णय एक भ्रम है।"

ऐच्छिक कर्म (Voluntary Action): ऐच्छिक कर्म वे हैं, जिन्हें व्यक्ति स्वेच्छापूर्वक या जान-बूझकर किसी उद्देश्य की प्राप्ति को ध्यान में रखकर करता है। यह दबाव में आकर किया गया कर्म नहीं है। ऐच्छिक कर्मों के संबंध में ही नैतिक निर्णय दिया जा सकता है। ऐच्छिक कर्मों को ही उचित या अनुचित कहा जा सकता है।

अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र (Applied Ethics): अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्र, नीतिशास्त्र की वह शाखा है जिसमें तात्कालिक महत्व की व्यावहारिक समस्या का नैतिक समाधान ढूंढने का प्रयास किया जाता है। वर्तमान की अनेक ज्वलंत समस्याएं मानव के कर्मों के कारण उत्पन्न हुई हैं। यहाँ उन समस्याओं का नैतिक समाधान अर्थात् 'क्या करना चाहिए' और 'क्या नहीं करना चाहिए' की चर्चा होती है जैसे- पर्यावरणीय संकट, शरणार्थी समस्या आदि।

नैतिकता की पूर्वमान्यताएँ (Postulates of Morality): नैतिकता की कुछ आवश्यक मान्यताएँ हैं, जिनके अभाव में नैतिकता की व्याख्या अर्थात् उचित-अनुचित का निर्धारण, उत्तरदायित्व का निर्धारण, कर्म और उसके फल के मध्य संबंध आदि की समुचित व्याख्या संभव नहीं है। इन्हें ही नैतिकता की पूर्वमान्यताएँ (Postulates of morality) कहते हैं। प्रमुख पूर्वमान्यताएँ ये हैं- (i) व्यक्तित्व (Personality), (ii) विवेक (Reason), (iii) इच्छा-स्वातंत्र्य/संकल्प की स्वतंत्रता (Freedom of will), (iv) आत्मा के अमरत्व में विश्वास तथा (v) ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास।

कांट ने नैतिकता की तीन पूर्वमान्यताएँ स्वीकार की हैं- (a) संकल्प की स्वतंत्रता (b) आत्मा की अमरता (c) ईश्वर का अस्तित्व।

- **(a) संकल्प की स्वतंत्रता:** कार्य के उचित-अनुचित के रूप में मूल्यांकन एवं उत्तरदायित्व निर्धारण हेतु संकल्प की स्वतंत्रता का होना आवश्यक है।
- **(b) आत्मा की अमरता:** नैतिक जीवन की पूर्णता किसी एक जन्म के प्रयास से संभव नहीं है। इसकी व्याख्या हेतु आत्मा को अमर मानना आवश्यक है।
- **(c) ईश्वर का अस्तित्व:** कर्त्तव्य एवं आनंद में सामंजस्य तथा जीवन में नैतिकता के प्रोत्साहन हेतु सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान एवं न्यायी ईश्वर की सत्ता को मानना आवश्यक है।

परिणाम सापेक्ष नैतिकता (Teleological Morality) : जब किसी कर्म के उचित या अनुचित, शुभ या अशुभ का मूल्यांकन उसके द्वारा उत्पन्न परिणाम के आधार पर हो तो उसे परिणाम सापेक्ष (फल सापेक्ष) नैतिकता कहते हैं। समाज में यही अवधारणा अधिक प्रचलित है। *समर्थक-* सुखवाद, उपयोगितावाद, प्रैग्मेटिज्म आदि।

परिणाम निरपेक्ष नैतिकता (Deontological Morality) : जब किसी कर्म के उचित या अनुचित होने का निर्धारण उसके द्वारा उत्पन्न परिणाम पर न होकर अन्तस्थ मूल्यों के आधार पर हो, तो उसे परिणाम-निरपेक्ष नैतिकता (नीतिशास्त्र) कहते हैं। इसके प्रबल समर्थक कांट हैं। वे नैतिकता में कोई अपवाद स्वीकार नहीं करते।

आपदधर्म (Apad Dharma) : किसी विशिष्ट परिस्थिति या संदर्भ में जब प्रयोजन बहुत अच्छा हो, मानवीय मूल्यों की रक्षा की बात हो तो फिर उस परिस्थिति में किए गए गलत कार्य को भी नैतिक कहा जा सकता है। जैसे- निर्दोष व्यक्ति की जीवन रक्षा हेतु झूठ बोलना।

प्रश्न-संग्रह
Notes

भारतीय दर्शन के नीतिशास्त्रीय तत्व (Ethical Elements of Indian Philosophy) :

1. **राधाकृष्णन्** के अनुसार दर्शन का मुख्य लक्ष्य निर्माणात्मक एवं सृजनात्मक है। सच्चा दर्शन मानव-जाति को असत्य से सत्य की ओर, अंधकार से प्रकाश की ओर, अज्ञान से ज्ञान की ओर, असंतोष से संतोष की ओर ले जाता है। इस रूप में यह जीवन के नैतिक मार्गदर्शन में उपयोगी है।
2. **कर्म नियम** अर्थात् प्रत्येक मनुष्य को उसके अच्छे कर्मों का अच्छा फल और बुरे कर्मों का बुरा फल अवश्य मिलता है। इस प्रकार कर्म नियम की अवधारणा सद्कर्मों को प्रोत्साहित और दुष्कर्मों को हतोत्साहित करने में सहायक है।
3. उपनिषदों में **पुरूषार्थ** की अवधारणा है जिसमें जीवन के आरम्भ में 'धर्म' अर्थात् मूल्य एवं नैतिकता के बीजारोपण की बात की गई है। यहाँ 'धर्म' के आधार पर ही आर्थिक एवं पारिवारिक जीवन के संचालन का समर्थन किया गया है।
4. **सत्यमेव जयते** अर्थात् अन्ततः सत्य की ही विजय होगी। (मुण्डकोपनिषद)
5. **वसुधैव कुटुम्बकम्** अर्थात् सम्पूर्ण विश्व एक परिवार के समान है। इस पृथ्वी पर रहने वाले सभी मानव एक परिवार की तरह जीवन के विभिन्न क्षेत्रों यथा सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक क्षेत्र में भागीदार हैं।
6. **सर्वे भवन्तु सुखिनः** सर्वे सन्तु निरामयाः अर्थात् ''सभी जीव सुखी रहें, सभी जीव निरोगी रहें'' ऐसी मंगल कामना है।
7. प्रत्येक भारतीय दर्शन एक नीति संहिता का प्रतिपादन करता है, जिसके अनुसार आचरण करते हुए जीवन के चरम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त किया जा सकता है। इस क्रम में मूल्यपूर्ण आचरण की बात की गई है।
8. गीता में **'लोक संग्रह'** की अवधारणा आई है जहाँ व्यावहारिक नैतिकता के स्तर पर 'लोक कल्याण' को जीवन का लक्ष्य माना गया है।
9. भारतीय दार्शनिक परम्परा में **'तेन त्यक्तेन भुंजीथाः'** (ईशावास्योपनिषद) अर्थात् त्यागपूर्वक भोग की अवधारणा का समर्थन किया गया है। विशुद्ध भोगवादी प्रवृत्ति का व्यक्ति, समाज और पर्यावरण सब के लिए घातक है। सामाजिक जीवन को सुखी एवं समृद्ध बनाने के लिए उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ उपभोग की सीमा का निर्धारण आवश्यक है। इस प्रकार यहाँ आत्म संयम, त्यागपूर्ण भोग एवं आचरण, प्रकृति प्रेम एवं सहअस्तित्व का समर्थन है।
10. **''एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति''** अर्थात् सत् एक ही है जिसे विद्वान लोग अलग-अलग प्रकार से वर्णित करते हैं। ऐसा मानने पर धार्मिक विवादों एवं मतभेदों, अतिवादी दृष्टिकोण, साम्प्रदायिकता एवं कट्टरता को रोकने तथा शांति, सद्भाव एवं सामंजस्य की स्थापना करने में सहायता मिलती है।

प्रशासन में गीता की भूमिका (Role of Geeta in Administration):

1. **निष्काम कर्म :** कर्मफल की आसक्ति से रहित होकर किया गया कर्म। यह सत्यनिष्ठा एवं बिना किसी भेदभाव के स्वकर्त्तव्य पालन को बढ़ावा देता है।

2. **स्थितप्रज्ञ :** प्रशासन में संवेगात्मक परिपक्वता, निष्पक्षता, धैर्य एवं सहिष्णुता को बढ़ावा।

3. **लोक संग्रह :** लोक कल्याण की भावना का प्रसार, परोपकार, सद्भावना, परानुभूति, संवेदशीलता, व्यक्तिगत हित के बजाय सामाजिक हित को वरीयता को बढ़ावा।

4. **स्व-धर्म :** प्रशासन में पद और स्थिति के अनुसार अपने निर्धारित कर्त्तव्यों का दृढ़तापूर्वक पालन।

5. **आपद धर्म :** आपदा, साम्प्रदायिक दंगे आदि की स्थिति में एक सीमा तक कानूनी प्रक्रिया के विपरीत जाकर भी जान-माल की रक्षा करना, शांति एवं सुव्यवस्था स्थापित करना।

गीता भाई-भतीजावाद से ऊपर उठकर अपने कर्त्तव्य पालन का संदेश देती है।

कर्त्तव्य (Duty): सामाजिक समुदाय के सदस्य के रूप में जो कार्य किया जाना चाहिए, वह कर्त्तव्य है। कर्त्तव्य एक प्रकार का नैतिक दायित्व है। पद और स्थिति के अनुसार जो करने योग्य है और जो हमें करना चाहिए वह हमारा कर्त्तव्य है। कर्त्तव्य के साथ उत्तरदायित्व बोध जुड़ा रहता है। नागरिकों का राज्य के प्रति मुख्य कर्त्तव्य हैं- वह विधि का पालन करे, देश के प्रति निष्ठा रखे, समय पर कर चुकाए, राजनीतिक गतिविधियों में सक्रिय रूचि ले। लॉस्की के अनुसार कर्त्तव्य और अधिकार एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

सद्‌गुण (Virtue): उचित कर्मों के निरंतर पालन करने या अभ्यास करने से मनुष्य में जो स्थायी आंतरिक प्रवृत्ति या एक विशेष प्रकार का नैतिक गुण विकसित होता है जिसे सद्‌गुण कहा जाता है। सद्‌गुण चरित्र की उत्कृष्टता एवं आत्मा के नैतिक विकास का प्रतीक है। सद्‌गुण की अभिव्यक्ति मानव के आचरण में होती है। सद्‌गुण की अवधारणा में कर्त्तव्यों का ज्ञान, कर्त्तव्यों का स्वेच्छा से पालन और उनका सतत् अभ्यास सम्मिलित होते हैं। सुकरात ने जहाँ यह माना कि 'सद्‌गुण ही ज्ञान है', वहीं प्लेटो ने विवेक, संयम, साहस एवं न्याय को सद्‌गुण के रूप में स्वीकार किया। अरस्तू मतानुसार अतियों से बचते हुए विवेकपूर्वक मध्यम मार्ग का अनुसरण करना सद्‌गुण है। ईमानदार जीवन के लिए सद्‌गुण एक ताज है।

सद्‌गुण नीतिशास्त्र (Virtue Ethics): सद्‌गुण नीतिशास्त्र में मानव के क्रियाकलापों का मूल्यांकन, उससे उत्पन्न परिणाम के आधार पर न करके कर्त्ता के चरित्र के आधार पर किया जाता है। यदि व्यक्ति सद्‌गुणी है तो उसका कर्म उचित होगा। चरित्र एवं आचरण में नैतिक उत्कृष्टता (Moral excellence in character & conduct) सद्‌गुणी की पहचान है।

दुर्गुण (Vice): अनुचित कर्मों के अभ्यास से मनुष्य में एक प्रकार का अनैतिक गुण विकसित होता है जिसे दुर्गुण कहा जाता है। यह चरित्र की निकृष्टता को बताता है।

उचित एवं सद्‌गुण (Right & Virtue): नैतिक नियमों के अनुरूप कर्म करना उचित है जबकि उचित कर्मों के सम्पादन से चरित्र का नैतिक उत्कर्ष ही सद्‌गुण है।

सद्‌गुण एवं कर्त्तव्य (Virtue & Duty) : सद्‌गुण चरित्र का वह गुण है जो हमें कर्त्तव्य पालन के योग्य बनाता है, जबकि नैतिक दृष्टिकोण से जो हमें करना चाहिए वह हमारा कर्त्तव्य हो जाता है। कर्त्तव्य में नैतिक बाध्यता का तत्व होता है।

कर्त्तव्य एवं दायित्व (Duty & Responsibility): कर्त्तव्य वह नैतिक जिम्मेदारी है जिसका निर्वहन व्यक्ति को करना चाहिए। कर्त्तव्य एवं दायित्व में अवियोज्य संबंध है। कर्त्तव्य में दायित्व निहित होता है। ज्यों ही हमें किसी कर्त्तव्य का ज्ञान होता है त्यों ही उस कर्त्तव्य का पालन हमारा दायित्व बन जाता है। कर्त्तव्य बोध दायित्व बोध की ओर ले जाता है।

अधिकार (Rights): अधिकार व्यक्ति के वे सामाजिक दावें हैं, जिन्हें राज्य मान्यता देता है और सरकार उनका संरक्षण करती है। अधिकार व्यक्ति के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास एवं उसकी निजी पहचान को विकसित करने में सहायक होते हैं। अधिकार, व्यक्तियों के अधिकार होते हैं जो विशिष्ट सामाजिक परिस्थितियों से उद्‌भूत होते हैं। भारतीय संविधान के भाग-III में अनुच्छेद 12 से 35 तक में मौलिक अधि कारों का वर्णन किया गया है।

नैतिक कर्म (Moral Action) : नैतिक दृष्टिकोण से जो कर्म उचित या अच्छा या प्रशंसनीय हो वह नैतिक कर्म कहलाता है। जैसे: असहाय की मदद करना, निरपराधी को बचाना।

अनैतिक कर्म (Immoral Action): नैतिक दृष्टिकोण से जो कर्म अनुचित है, बुरा या निंदनीय है, उसे अनैतिक कर्म कहा जाता है। उदाहरण: चोरी करना, भ्रष्टाचार।

नीति शून्य कर्म (Non Moral Action): मानव के जिन कर्मों का नैतिक मूल्यांकन या नैतिक निर्णय न हो सके, अर्थात् जिनका उचित-अनुचित, अच्छा-बुरा के रूप में निर्णयन न हो सके तो वे नीति शून्य कर्म हैं। उदाहरण के लिए अबोध बच्चों के कर्म, पागलों के कर्म, अनैच्छिक कर्म (छींक आने पर दूसरों को चोट लग जाना), पशु के कर्म, प्राकृतिक घटनाएं आदि।

प्रशासनिक नीतिशास्त्र (Administrative Ethics): प्रशासनिक निर्णयों एवं कार्यों में नैतिकता/नैतिक मूल्यों का समावेश ही प्रशासनिक नीतिशास्त्र है। नैतिक मूल्य लोगों के व्यवहार को निर्देशित एवं संस्कारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जब इन नैतिक मूल्यों की प्रशासनिक परिप्रेक्ष्य में चर्चा, अनुपालन एवं महत्ता स्वीकार की जाती है तो प्रशासनिक नीतिशास्त्र की स्थिति उभरती है।

स्वच्छ, प्रभावी एवं कुशल प्रशासन हेतु विधि, नियम, दिशा-निर्देश, मानक तथा स्वीकृत मूल्यों एवं मानदंडों के अनुसार प्रशासनिक निर्णयों एवं कार्यों का सम्पादन प्रशासन में नैतिकता को बढ़ावा देने में सहायक है। इसमें प्रशासनिक अधिकारियों के निर्णयों एवं कार्यों का कुछ सिद्धांतों, मानदंडों, मानकों एवं सिविल सेवा के आधार मूल्यों जैसे- सत्यनिष्ठता, वस्तुनिष्ठता, निष्पक्षता आदि के आधार पर मूल्यांकन किया जाता है अर्थात् उन्हें उचित या अनुचित, सही या गलत, अच्छे या बुरे के रूप में निर्धारित किया जाता है।

1994 में ब्रिटिश सरकार ने लॉर्ड नोलन की अध्यक्षता में एक समिति गठित की थी जिसने निःस्वार्थ भावना, सत्यनिष्ठा, निष्पक्षता, जवाबदेयता, पारदर्शिता, ईमानदारी तथा अच्छा नेतृत्व नामक सात सिद्धांत प्रशासनिक नैतिकता के लिए वर्णित किए थे।

अच्छे नेता के गुण (Qualities of a Good Leader): 1. दूरदर्शिता, 2. कुशल जनसंपर्क कर्त्ता, 3. परिस्थितियों के अनुसार निर्णय की क्षमता, 4. कार्य करने की इच्छा, 5. अनुयायियों को प्रोत्साहित एवं संगठित करने की क्षमता, 5. संवेगात्मक बुद्धि की अधिकता, 6. प्रभावी संचार कौशल, 7. शारीरिक एवं मानसिक ऊर्जा, 8. मैत्रीभाव एवं स्नेह, 9. चारित्रिक बल, 10. उत्तरदायित्व वहन करने की क्षमता, 11. सही समय पर सही कदम उठाने की क्षमता, 12. अच्छा स्वास्थ्य, 13. बुद्धिमत्ता एवं ईमानदारी, 14. मानव संबंधों का ज्ञान, 15. संगठनात्मक गतिविधियों का कुशल संचालन आदि। अच्छा नेता वही है, जो अपने बाद अच्छा नेतृत्व तैयार करे।

अच्छे प्रशासक के गुण (Qualities of a Good Administrator): अपने पद से संबंधित कर्त्तव्यों एवं उत्तरदायित्व का ज्ञान एवं उनका समुचित निर्वहन, संवेगात्मक बुद्धि, निष्पक्षता, न्यायप्रियता, सत्यनिष्ठा, गैर-तरफदारी, भेदभाव रहितता, वस्तुनिष्ठता, विवेकाधीन अधिकारों का जनहित में उपयोग, टीम वर्क, सकारात्मक कार्य-संस्कृति के निर्माण में सहायक, कमजोर वर्गों के प्रति समानुभूति, सहिष्णुता एवं करुणा का भाव, संवेदनशीलता, लोक सेवाओं की त्वरित एवं प्रभावी आपूर्ति, प्रभावोत्पादक अनुनय, नैतिकता एवं सदाचार, बौद्धिक सर्तकता एवं नवाचार की प्रवृत्ति, आत्मविश्वास, जन-जागरूकता एवं जन-सहभागिता बढ़ाकर नीतियों एवं योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन, अपने निर्णय एवं कार्यों से जनमानस में मूल्यों का प्रसार करे एवं इनका पथ-प्रदर्शन करे आदि।

मूल्य (Values): मनुष्य अपने जीवन में उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को स्वीकार करता है। इस लक्ष्य की प्राप्ति में जो आदर्श रूप में सहायक होते हैं वही मूल्य हैं। मूल्य जीवन को शुभ एवं गरिमापूर्ण बनाते हैं एवं व्यक्तिगत एवं चारित्रिक उत्थान में सहायक हैं। उदाहरणः दया, प्रेम, सत्यनिष्ठा, मैत्री आदि मूल्य के रूप में स्वीकार्य हैं। इनके आधार पर ही समाज अपने सदस्य के व्यवहार को निर्देशित करता हैं तथा उनके आचरण का मूल्यांकन (उचित/अनुचित) करता है। मूल्य, मानव सोच, व्यवहार एवं कार्य में मार्गदर्शक के रूप में कार्य करते हैं। कर्मों के संपादन के क्रम में उत्पन्न होने वाले द्वंद्वों के निराकरण का आधार यही मानवीय मूल्य हैं। दूसरे शब्दों में मूल्य वे कसौटियाँ, व्यवहार के पैमाने या मानदण्ड हैं, जिनके आधार पर अच्छे-बुरे, वांछित-अवांछित, सही-गलत एवं करणीय-अकरणीय का निर्णय किया जाता है।

साधक मूल्य एवं साध्य मूल्य : साधक मूल्य वे हैं जो उच्च आदर्शों की प्राप्ति में सहायक हैं। जैसे: वस्त्र, मकान आदि। ये वस्तुएं मूल्यवान हैं क्योंकि ये जीवन रक्षा या जीवन वृद्धि में सहायक हैं, जबकि साध्यमूल्य स्वतः मूल्यवान होते हैं। वे किसी लक्ष्य प्राप्ति के साधन नहीं माने जाते हैं। उदाहरणः सत्य, शुभ आदि। साध्य मूल्य अपने ही कारण मूल्यवान होता है जबकि साधक मूल्य अपने परिणामों के कारण मूल्यवान होता है। कांट मतानुसार शुभ संकल्प साध्य मूल्य है। गाँधी जी साध्य एवं साधन दोनों की पवित्रता को स्वीकार करते हैं।

मूल्य-संकट (Crisis of Value): वर्तमान में मूल्य-संकट की स्थिति जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में दिखाई देती है। भारत के पूर्व राष्ट्रपति राधाकृष्णन ने मूल्य-संकट को स्पष्ट करते हुए कहा है कि- 'हम जानते हैं कि सही क्या है, हम उसकी सराहना भी करते हैं परंतु उसे अपनाते नहीं है। हम जानते हैं कि बुरा क्या है, हम उसकी निंदा भी करते हैं फिर भी उसी के पीछे भागते हैं।' यह मूल्य-संकट की स्थिति को दर्शाता है। स्पष्ट है कि ज्ञान होते हुए भी उचित कर्मों का पालन न करना और अनुचित कर्मों को अपनाना मूल्य-संकट की स्थिति को दर्शाता है।

विवेक/अंतरात्मा/अंतःकरण का संकट (Crisis of Conscience) : जब सही और गलत, उचित और अनुचित के बीच भेद का निर्धारण करने में व्यक्ति असमर्थ हो या उसके सामने कठिनाई उत्पन्न हो, तो फिर उसे विवेक का संकट कहा जाता है। विवेक के माध्यम से ही हम उचित एवं अनुचित के बीच विभेद करते हैं। परंतु वर्तमान समय में अज्ञानता, नकारात्मक सामाजीकरण, तात्कालिक व्यक्तिगत लाभ, अर्थ और काम की प्रधानता आदि के कारण 'विवेक संकट' की स्थिति उत्पन्न हो रही है। वास्तव में 'क्या उचित है' और 'क्या अनुचित है' इसके मध्य अंतर कर पाने में असमर्थता के कारण अनुचित/गलत कर्मों को करने की प्रवृत्ति बढ़ रही है।

अंतरात्मा/अंतःकरण की आवाज़ (Vocie of Conscience) : अंतःकरण मनुष्य की वह आंतरिक नैतिक शक्ति है, जो सही और गलत का साक्षात् ज्ञान परिणाम पर विचार किये बिना ही प्रदान करती है। यह व्यक्ति को नैतिक पथ पर चलने के लिए प्रोत्साहित करती है, कर्त्तव्य पालन पर बल देती है एवं विकट परिस्थितियों में भी सही रास्ते का मार्गदर्शन करती है।

गाँधी मतानुसार अंतःकरण ईश्वर का अंश है। ऐसी स्थिति में वह ईश्वरीय गुणों जैसे- दया, करूणा, प्रेम, न्याय, सत्य आदि से भी युक्त है। ऐसी स्थिति में यदि हम अंतःकरण की आवाज़ के अनुसार निर्णय लेते हैं और कार्य करते हैं, तो फिर वह उचित होगा।

प्रशासनिक संदर्भ में जब स्पष्ट नियम, कानून, मानक या दिशा-निर्देश न हो, तो वैसी स्थिति में प्रशासक को अपनी अंतरात्मा की आवाज़ के अनुसार कार्य करना चाहिए।

विश्वास न्यूनता (Trust Deficit): विश्वास न्यूनता परस्पर एक-दूसरे पर विश्वास की कमी को दर्शाता है। यह कमी जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में दिखाई देती है। भ्रष्टाचार, तरफदारी, पक्षपात, जातिवाद, धार्मिक कट्टरता, कथनी और करनी में अंतर, संबंधों का निर्धारण लाभ और हानि के आधार पर होना, विचार, वचन एवं कार्य में असंगति, निजी पक्ष की जानकारी के दुरूपयोग की संभावना आदि के कारण विश्वास न्यूनता की स्थिति उत्पन्न हुई है।

निष्पक्षता (Impartiality): एक लोक सेवक को जाति, धर्म, लिंग, भाषा, जन्म-स्थान, सम्पत्ति, प्रांत आदि के आधार पर नागरिकों के साथ भेद-भाव नहीं करना चाहिए। उसे सभी नागरिकों के हित में कार्य करना चाहिए।

वस्तुनिष्ठता (Objectivity): एक लोक सेवक को अपना निर्णय और कार्य मन-माने तरीके से न करके वस्तुनिष्ठ आधार (जैसे- नियम, कानून, दिशा-निर्देश, आचरण संहिता आदि) पर करना चाहिए। सार्वजनिक नियुक्तियाँ करने, संविदाओं को स्वीकृति देने, किसी व्यक्ति विशेष को पुरस्कार, लाभों या कार्यों की संस्तुति करने आदि के क्रम में निर्णय लेते समय तथ्यों एवं योग्यताओं को आधार बनाना चाहिए। यह प्रशासन में पारदर्शिता को बढ़ाने एवं भ्रष्टाचार को रोकने में सहायक है। वस्तुनिष्ठता सिविल सेवा का एक महत्वपूर्ण बुनियादी मूल्य है।

सामाजीकरण (Socialization): सामाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से व्यक्ति सामाजिक मानदण्डों, मूल्यों, परम्पराओं, व्यवहार के ढंग एवं समाज का क्रियाशील सदस्य बनना सीखता है। बचपन में बच्चों के मन-मस्तिष्क में मूल्यों के बीजारोपण में सामाजीकरण की महत्वपूर्ण भूमिका है।

सांस्कृतिक सापेक्षतावाद (Cultural Relativism): सांस्कृतिक सापेक्षतावाद का आशय है कि किसी भी संस्कृति में निहित मूल्यों को उस संस्कृति के लोगों की दृष्टि से देखा और परखा जाना चाहिए, न कि अपने दृष्टिकोण से अर्थात् स्वयं के द्वारा स्वीकृत मूल्यों के आधार पर दूसरी संस्कृति की परम्पराओं एवं मान्यताओं का मूल्यांकन नहीं करना चाहिए।

आदर्शात्मक व्यवस्था (Normative Order): समाज की आदर्शात्मक व्यवस्था यह बताती है कि समाज में क्या होना चाहिए अर्थात् किस प्रकार का व्यवहार करना चाहिए, इस रूप में समाज अपने सदस्यों से जो अपेक्षाएं रखता है, वे आदर्श व्यवस्था के रूप हैं।

यथार्थ व्यवस्था (Factual Order): समाज की यथार्थ व्यवस्था यह बताती है कि वास्तव में समाज में किस प्रकार का व्यवहार होता है। इसके दो प्रकार हो सकते हैं- (a) सामाजिक मानदण्डों के अनुकूल व्यवहार जो सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखने में सहायक है। (b) सामाजिक मानदण्डों के प्रतिकूल व्यवहार जो समाज के विघटन एवं अस्वस्थ समाज के निर्माण की ओर ले जाता है।

गैर-तरफदारी (Non-partisanship): एक सिविल सेवक को किसी राजनीतिक दल या नेता के पक्ष या विपक्ष में, नियमों, कानूनों एवं दिशा-निर्देशों (आचरण संहिता) आदि का उल्लंघन करते हुए कोई कार्य नहीं करना चाहिए। उसे अपना कार्य गैर-राजनीतिक ढंग से सम्पादित करना चाहिए। उदाहरणस्वरूप एक सिविल सेवक को राजनीतिक आंदोलन, राजनीतिक धरने या प्रदर्शन में शामिल नहीं होना चाहिए।

समानुभूति/परानुभूति/तदनुभूति (Empathy): दूसरों की भावनाओं एवं परिस्थितियों को समझना एवं उनके तकलीफों एवं कठिनाइयों को महसूस करना ही परानुभूति है। परानुभूति से युक्त व्यक्ति दूसरों की भावनाओं को अच्छी तरह समझता है तथा उनके साथ जुड़ने की योग्यता रखता है। इसमें दूसरों की समस्याओं को तन्मयता से सुनना, संवेदनशीलता प्रकट करना तथा दूसरों की भावनाओं, समस्याओं एवं अपेक्षाओं को ध्यान में रखकर कदम उठाने एवं सहायता करने का भाव निहित है। प्रशासनिक अधिकारी में समानुभूति का होना अत्यन्त आवश्यक है, तभी प्रशासनिक तंत्र में संवेदनशीलता एवं लोक सेवा के प्रति समर्पण का भाव आ सकता है। संत नरसी मेहता के द्वारा रचित और गाँधी के दैनिक प्रार्थना में सम्मिलित भजन में समानुभूति का भाव विद्यमान है-

वैष्णव जन तो तेने कहिये	उन लोगों को वैष्णव/श्रेष्ठजन कहो,
जे पीड परायी जाणे रे ।	जो दूसरों की पीड़ा अनुभव करें।
पर दु:खे उपकार करे तो ये	जो दु:खी हैं उनकी सहायता करें,
मन अभिमान न आणे रे ।	लेकिन अपने मन में कभी भी अहंकार न आने दे।

उदाहरणस्वरूप, राजस्थान सरकार द्वारा चलाया गया 'प्रशासन गाँव की ओर', 'न्याय आपके द्वार' योजना प्रशासन में परानुभूति की भावना को बढ़ाने का एक प्रयास है।

संक्षेप में- समानुभूति व्यक्ति की वह गहन संवेगात्मक समझ एवं क्षमता है जिसमें वह स्वयं को दूसरे लोगों की स्थिति से जोड़कर, उनकी समस्याओं एवं तकलीफों को तन्मयता से सुनकर उनकी मन:स्थिति को समझते हुए समस्या के स्वरूप एवं उसकी गहनता को महसूस करता है। समानुभूति प्रभावपूर्ण संवाद में बाधक अनेक कठिनाईयों को दूर कर सकता है।

सहिष्णुता (Tolerance) : व्यापक अर्थ में सहिष्णुता का आशय है- अपने विचार, मत, धर्म (Religion) एवं व्यवहार से भिन्न अन्य विचारों, मतों, धर्मों एवं व्यवहारों के प्रति सह-अस्तित्व का भाव रखते हुए उनके प्रति भी आदर एवं सम्मान प्रकट करना। इससे समाज में संवाद की स्थिति बनी रहती है तथा शांति व्यवस्था के साथ-साथ सामंजस्य स्थापित करने में आसानी होती है।

करुणा (Compassion): प्राणी-मात्र के लिए मंगलकामना का भाव। करुणा दु:खी एवं कमजोर व्यक्तियों या प्राणियों के प्रति उत्पन्न होने वाली ऐसी भावना है जो उनकी कमजोर एवं दु:खद स्थिति को समझने,

उनके प्रति समानुभूतिमूलक चिंता (Empathic Concern) रखने और उनके दु:खों को दूर करने के प्रयासों को प्रोत्साहित करती है। इसमें दु:खियों एवं जरूरतमंदों की मदद एवं सेवा का भाव निहित है। उदाहरणस्वरूप सर्दियों में सरकार के द्वारा रैन-बसेरा बनाया जाना।

बौद्ध-दर्शन की महायान शाखा का नैतिक आदर्श बोधिसत्व हैं। इन्हें *करुणा के महासागर* के रूप में जाना जाता है।

नैतिक मापदण्ड (Moral Standard): किसी भी पदार्थ के मूल्यांकन के लिए किसी मापदण्ड (Standard) की आवश्यकता होती है। मनुष्य के कर्मों का मापदण्ड क्या है, अर्थात् किस आधार पर किसी व्यक्ति के कर्मों को अच्छा-बुरा इत्यादि कहा जाता है।

प्रशासन (Administration): इसका शाब्दिक अर्थ है- सेवा करना या प्रबंधित करना। आशय है- 'सार्वजनिक या निजी मामलों का प्रबंधन।' किसी निश्चित उद्देश्य को पूरा करने के लिए किया गया सुनिश्चित कार्य है जिसमें योजनाबद्ध व्यवस्था, मानव एवं भौतिक संसाधनों का व्यवस्थापन (संगठन एवं प्रयोग) है। इसके दो मूल घटक हैं- 1. सामूहिक प्रयास 2. समान लक्ष्य। इस प्रकार प्रशासन का अर्थ होता है- 'एक समान लक्ष्य को पूरा करने के लिए लोगों के एक समूह का सामूहिक प्रयास।' अपने संस्थागत व्यवस्थापनों के आधार पर प्रशासन को दो भागों में बांटा जाता है- 1. लोक प्रशासन 2. निजी प्रशासन

(i) लोक प्रशासन (Public Administration): जो सरकारी व्यवस्थापन है।

1. लोक प्रशासन पर राजनीतिक निर्देशन एवं नियंत्रण होता है।
2. इसका उद्देश्य जनता की सेवा करना है और समुदाय के कल्याण को बढ़ाना है।
3. लोक प्रशासन जनता के प्रति उत्तरदायी एवं जबाबदेह होता है। (इसे अपने एक परिवेश में काम करना होता है। जहाँ मीडिया, राजनीतिक पार्टियाँ एवं दबाव समूह आदि होते हैं।)
4. लोक प्रशासन में काम और फैसले एकरूप कानूनों एवं नियमों से निर्धारित होते हैं। यहाँ व्यवहार की निरंतरता पर बल होता है।

(ii) निजी प्रशासन (Private Administration): यह गैर-सरकारी व्यवस्थापन है, जो व्यावसायिक या व्यापारिक उद्यमों में दिखता है।

1. यह गैर-राजनीतिक होता है।
2. इसका उद्देश्य लाभ को अधिकतम बनाना है।
3. सामान्यत: यह जनता के प्रति जबावदेही से मुक्त होता है।
4. निजी प्रशासन भेदभावपूर्ण व्यवहार कर सकता है।

लोकतांत्रिक प्रशासन (Democratic Administration): लोकतांत्रिक प्रशासन लोकतंत्र एवं प्रशासन का सम्मिलित रूप है जिसमें प्रशासन के लोकतंत्रीकरण (Democratization of Administration) का भाव निहित होता है। आशय है कि शासन व्यवस्था में लोकतांत्रिक मूल्यों जैसे-समानता, स्वतंत्रता, न्याय आदि के साथ-साथ अन्य अवधारणाओं एवं सिद्धांतों का समावेश हो तथा व्यावहारिक स्तर पर उनको क्रियान्वित करने का प्रयास हो। इसमें निर्णय प्रक्रिया में उन व्यक्तियों या वर्गों की सहभागिता सुनिश्चित की जाती है जो इन निर्णयों से प्रभावित होते हैं। उदाहरणस्वरूप, कृषि विकास की नीति बनाते समय कृषकों से परामर्श लेना।

लोकतांत्रिक प्रशासन में प्रशासन और जनता के बीच दूरी नहीं बल्कि सकारात्मक सहयोग एवं परस्पर निर्भरता होती है। लोकतांत्रिक प्रशासन के प्रमुख पक्ष हैं-

1. प्रशासन की संवेदनशीलता और जनता की समस्याओं से सरोकार।
2. जन-जागरूकता, जन-सहभागिता, जन-कल्याण एवं सुरक्षा को महत्ता।
3. समाज के व्यापक हितों की चिंता।

4. कानून की सर्वोच्चता तथा उत्तरदायित्व एवं जवाबदेयता की भावना।
5. जनमत का प्रभाव एवं सम्मान।
6. अधिकारों के साथ-साथ कर्त्तव्यों का बोध।
7. लोक कल्याणकारी कार्यों के प्रति प्रतिबद्धता।
8. लोकतांत्रिक मूल्यों की स्थापना एवं प्रसार।

सरकार (Government): सरकार से तात्पर्य उस संगठनात्मक ढांचे से है जिसके माध्यम से किसी राष्ट्र या समाज को शासित किया जाता है। इस रूप में सरकार (Government) से तात्पर्य शासन करने के लिए बनाए गए तंत्र से है।

शासन (Governance): शासन से तात्पर्य उन तौर-तरीकों एवं प्रक्रियाओं से है जिसके द्वारा नीतियों एवं कानूनों को बनाया एवं क्रियान्वित किया जाता है। इस रूप में शासन, तंत्र के कार्य पद्धति/कार्य करने की विधियों को दर्शाता है। शासन सरकार का क्रियात्मक या व्यवहारात्मक पक्ष है।

सरकार सैद्धांतिक या संस्थागत होती है। एक ढांचे के रूप में काम करती है। इसमें वेतन, भत्ते, नियुक्ति आदि की बात आती है। जबकि शासन प्रक्रियागत पक्ष एवं उसके अमल या प्रयोग (Application) को दर्शाता है।

सुशासन (Good Governance): सुशासन एक बहुआयामी एवं गतिशील अवधारणा है, जो एक बेहतर समाज के लिए विभिन्न आदर्शों को समाहित किये हुए है। इसका तात्पर्य एक ऐसी शासन व्यवस्था से है जो जनहित के लिए प्रतिबद्ध हो तथा नि:स्वार्थ भाव से राष्ट्र एवं समाज को इस प्रकार से मार्गदर्शित एवं निर्देशित कर सके कि समाज अपनी क्षमताओं एवं उद्देश्यों को प्राप्त कर सके। सुशासन का आशय है- सम्यक् रूप से शासन। जब राज्य की मशीनरी एवं संस्थाएँ मूल्यों से युक्त होकर उचित कर्त्तव्यों का पालन करते हुए उत्कृष्टता को प्राप्त करती हैं तो फिर उसे सुशासन कहते हैं। सुशासन की अवधारणा के मूल में विधि का शासन, प्रभावी एवं कुशल प्रशासन, नागरिकों के जीवन स्तर में सुधार, मितव्ययी प्रशासन, सामाजिक एवं प्रशासनिक जवाबदेहिता, पारदर्शिता, जनसहभागिता, प्रभावशीलता, दक्षता, सूचना की उपलब्धता, अनुक्रियाशीलता, मानवाधिकार संरक्षण, समानता एवं नागरिक केन्द्रित शासन आदि को स्वीकार किया जाता है। यह *जनोन्मुख, विकासोन्मुख, कल्याणोन्मुख एवं मूल्योन्मुख शासन* को इंगित करता है। सुशासन होने पर गुणवत्तापूर्ण सेवा की त्वरित आपूर्ति होती है। इससे जनता के जीवन की गुणवत्ता में सुधार होता है।

सुशासन की अवधारणा वस्तुत: **'SMART'** शासन की अवधारणा है।

यहाँ SMART का आशय है-

S – Simple/Small (सरल/छोटा) - शासन में औपचारिक एवं जटिल प्रक्रिया के बजाय लक्ष्य एवं परिणाम पर बल देना चाहिए।

M – Moral (नैतिक) - निर्णय एवं कार्यों के सम्पादन के क्रम में निर्धारित कर्त्तव्य एवं मूल्यों को ध्यान में रखा जाए।

A – Accountable (जवाबदेह) - शासन अपने निर्णयों एवं कार्यों के लिए जनता एवं जनप्रतिधियों के प्रति जवाबदेह हो।

R – Responsible/Responsive (उत्तरदायित्वपूर्ण/अनुक्रियाशील) - आम जनता की समस्याओं के प्रति अनुक्रियाशील हो।

T – Transparent (पारदर्शी) - निर्णय और कार्य के सम्बन्ध में ''क्यों और कैसे'' को गोपनीय बनाने की बजाय उसकी जानकारी आम जनता को उपलब्ध हो।

नैतिक शासन (Ethical Governance): इसका आशय है- शासन प्रक्रिया में नैतिक मूल्यों का अनुप्रयोग या उन्हें व्यवहार में लाना। नैतिक शासन में सेवा की भावना एवं समर्पण भाव, सत्यता एवं ईमानदारी, परानुभूति, सहिष्णुता, करुणा, कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व बोध का भाव निहित होता है। यह मूल्य आधारित एवं मूल्य उन्मुख शासन पर बल देता है। इसमें साध्य की प्राप्ति हेतु साधन की पवित्रता पर विशेष बल होता है। यह शासन में भ्रष्टाचार के उन्मूलन, निष्पक्षता एवं नि:स्वार्थवादिता को दर्शाता

है। नैतिक मूल्यों का उल्लंघन होने पर दंड का प्रावधान हो। स्वतंत्र एवं निष्पक्ष संस्थाएं ऐसे मामलों की जांच करें। दोष सिद्ध हो जाने पर शीघ्रतापूर्वक दंडात्मक कार्यवाई हो। एक ऐसी कार्य संस्कृति का विकास हो जहां लोग स्वेच्छा से नैतिक आचरण करें।

वैश्विक शासन (Global Governance): बढ़ती वैश्विक समस्याओं एवं चुनौतियों से प्रभावी रूप से निपटने के लिए अधिक उत्तरदायी, प्रभावी एवं अनुक्रियाशील एक नये गवर्नेंस मॉडल 'वैश्विक शासन' की अवधारणा उभरकर सामने आयी है, ताकि विश्व के लिए चुनौती बन रही समस्याओं का प्रभावशाली निदान हो सके।

वैश्विक महामारी कोविड, मंकीपॉक्स एवं अन्य स्वास्थ समस्याएँ, जलवायु संकट, शरणार्थी समस्या, अफगानिस्तान, इराक, सीरिया, यूक्रेन युद्ध एवं ताइवान संकट, श्रीलंका आदि देशों में वित्तीय संकट, हथियारों की बढ़ती होड़ आदि के संदर्भ में ही वैश्विक शासन की आवश्यकता उभरकर सामने आ रही है, ताकि मिल-जुल कर समस्याओं का समाधान किया जा सके और वैश्विक शांति की स्थापना की जा सके।

संवैधानिक नैतिकता (Constitutional Morality): न्यायपालिका संवैधानिक लोकतंत्र की संरक्षक है। संवैधानिक मूल्यों को संवैधानिक नैतिकता के निर्धारण का आधार माना जाता है, जैसे- समानता, स्वतंत्रता, न्याय, पंथनिरपेक्षता, बंधुत्व आदि संवैधानिक मूल्य हैं। इनके प्रति प्रतिबद्धता रखते हुए इनके अनुसार आचरण संवैधानिक नैतिकता है। जबकि इनके विपरीत आचरण नैतिकता पर प्रहार है। संविधान को भी नैतिकता के निर्धारण का आधार माना जाता है अर्थात् जो कर्म विधिक हैं और जिन्हें करने कि संवैधानिक मान्यता है वे संवैधानिक नैतिकता के दायरे में आ जाते हैं। जबकि जो कर्म गैर-कानूनी हैं, जो संवैधानिक मान्यताओं के विपरीत हैं वे अनैतिक हो जाते हैं। कानून के दृष्टिकोण से ऐसे कर्मों को अपराध माना जाता है और इस संदर्भ में दंड आदि की व्यवस्था होती है।

संवैधानिक नैतिकता सदैव सामाजिक नैतिकता के अनुरूप नहीं होती अर्थात् जो सामाजिक दृष्टिकोण से मान्य हो वह संवैधानिक दृष्टिकोण से अमान्य हो सकता है तथा जो सामाजिक नैतिकता के प्रतिकूल हो उसे भी विधिक एवं संवैधानिक मान्यता मिल सकती है, उदाहरणस्वरूप सितम्बर 2019 में सर्वोच्च न्यायालय ने सर्वसम्मति से समलैंगिकों द्वारा पारस्परिक सहमति से बनाये यौन संबंधों को निरपराध घोषित कर उसे विधिक एवं संवैधानिक मान्यता प्रदान कर दी और इससे संबंधित धारा 377 को गैर-संवैधानिक घोषित कर दिया। अनेक विचारक इसे सामाजिक नैतिकता के विपरीत मानते हैं।

सरकारी सेवक (Government Servant) : केन्द्र या राज्य सरकार की संचित निधि (Consolidated Fund) से वेतन प्राप्त करने वाले तथा सरकार द्वारा राज्य के कृत्यों के संदर्भ में किसी लोक सेवा या पद पर नियुक्त किये गये या नियोजित किये गये अधिकारी या सेवक 'सरकारी नौकर' (Government Servant) कहलाते हैं। इस परिभाषा में समस्त सिविल सेवकों सहित न्यायपालिका, सैन्य सेवाओं, लोक उपक्रमों एवं स्वायत्तशासी संगठनों के कार्मिक सम्मिलित हैं।

भ्रष्टाचार रोकथाम अधिनियम, 1988 की धारा- 2 (सी) में सरकारी सेवक की श्रेणी में लोक दायित्व वहन करने की एवज में सरकार से वेतन, फीस, कमीशन प्राप्त करने वाले व्यक्ति, स्थानीय प्राधिकरणों में सेवारत व्यक्ति, लोक उपक्रमों में कार्यरत व्यक्ति, न्यायाधीश, न्यायालयों के अन्य व्यक्ति, निर्वाचन कार्यों में लगे व्यक्ति, पंजीकृत सहकारी संस्थाओं के पदाधिकारी, चयन मण्डलों के अध्यक्ष, सदस्य तथा कार्मिक, विश्वविद्यालयों के कुलपति तथा शिक्षक और सरकारी सहायता से संचालित होने वाले शैक्षिक, वैज्ञानिक, सामाजिक सांस्कृतिक या अन्य संस्थाओं के व्यक्ति सम्मिलित किए गए हैं।

सिविल सेवा (Civil Service) : आधुनिक युग में सिविल सेवाएं, सरकार के नियंत्रण एवं संरक्षण में कार्यरत वे कार्मिक वर्ग हैं, जो शासन की नीतियों, कार्यक्रमों एवं विधियों के क्रियान्वयन में संलग्न होते हैं, ताकि राज्य की रक्षा, शांति एवं व्यवस्था, जनकल्याण एवं विकास के लक्ष्य प्राप्त हो सकें। सिविल सेवाएं प्रशासनिक संगठन का एक ऐसा माध्यम है, जिसके द्वारा सरकार अपने लक्ष्य को प्राप्त करती है। सिविल सेवा का अभिप्राय सरकार के उन स्थायी और गैर-राजनीतिक अधिकारियों से है जिनकी नियुक्ति सामान्यत: प्रतियोगिता परीक्षाओं के आधार पर योग्यता परीक्षण के बाद होती है और जो एक बार सरकरी

नौकरी में आने के बाद सामान्यत: अवकाश ग्रहण करने की आयु तक उस पर बने रहते हैं। सिविल सेवाओं में सैनिक, न्यायिक और औद्योगिक सेवाओं के कार्मिक सम्मिलित नहीं होते।

सिविल सेवक के कार्य : सरकार की नीतियों का क्रियान्वयन, जन शिकायतों का निवारण, स्वास्थ्य, शिक्षा, यातायात, संचार आदि की व्यवस्था, अर्द्ध-विधायी कार्य जैसे-प्रत्यायोजित विधान, अर्द्ध-न्यायिक कार्य जैसे प्रशासकीय अधिनिर्णय। कानून एवं योजनाओं के निर्माण के संदर्भ में माँगे जाने पर राजनीतिक कार्यपालिका/विधायिका को निष्पक्ष एवं निर्भीक सलाह देना और संबंधित आंकड़ें उपलब्ध कराना।

सिविल सर्विस डे (Civil Service Day) : शासन तंत्र में सिविल सेवकों के योगदान तथा आधुनिक समाज में उनकी उपादेयता को स्वीकार करते हुए उनके कार्यो एवं प्रयासों को प्रेरित एवं प्रोत्साहित करने हेतु मनाया जाने वाला दिवस 'सिविल सेवा दिवस' कहलाता है। भारत में केन्द्रीय स्तर पर ''कार्मिक, लोक शिकायत तथा पेंशन मंत्रालय'' प्रतिवर्ष 21 अप्रैल को यह दिवस मनाता है तथा इस अवसर पर व्यावहारिक लोक प्रशासन में उत्कृष्ट कार्य करने वाले कार्मिकों को प्रधानमंत्री पुरस्कार (Prime Minister's Award for Excellence in Public Administration) प्रदान किया जाता है।

21 अप्रैल, 1947 को आई.सी.एस. परिवीक्षार्थियों को सम्बोधित करते हुए सरदार वल्लभभाई पटेल ने कहा था- ''आप भारतीय सेवा में अग्रणी हैं और इस सेवा का भविष्य, आपके द्वारा डाली गयी परम्पराओं एवं नींव पर, आपके चरित्र पर, क्षमताओं एवं सेवा में आपकी गहन भावना (Spirit) या वफादारी पर निर्भर करता है।'' उन्होंने इस अवसर पर सिविल सेवकों को "Steel Frame of India" कहा था। सन् 2006 से इस दिवस को सिविल सेवा दिवस के रूप में मनाया जाता है।

कल्याणकारी राज्य (Welfare State) : आधुनिक युग में सरकारों का एक प्रमुख कार्य लोक कल्याण है, जिसमें महात्मा बुद्ध के 'बहुजन-हिताय, बहुजन-सुखाय' तथा 'सबका साथ, सबका विकास, सबका सम्मान व सबका कल्याण' का भाव निहित है।

कल्याणकारी राज्य वह है, जिसका उद्देश्य सामाजिक सुरक्षा, समाज के सभी वर्गों के मूलभूत आवश्यकताओं यथा- भोजन, पेयजल, आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण की पूर्ति, आर्थिक विकास, संचार, परिवहन, चिकित्सा, रोजगार के अवसर आदि को उपलब्ध कराना है। प्राचीन यूनानी चिन्तक अरस्तू के अनुसार ''राज्य, जीवन के लिए अस्तित्व में आया और अच्छे जीवन के लिए उसका अस्तित्व बना हुआ है।''

वर्तमान में विभिन्न सामाजिक सेवाएं, प्रशासन के माध्यम से नागरिकों को उपलब्ध करवाई जाती हैं। इस प्रकार प्रशासन की पम्परागत भूमिका (कानून और व्यवस्था को बनाये रखना) में परिवर्तन हुआ है। अब वे नागरिकों के कल्याण हेतु विभिन्न प्रकार के कार्य करते हैं। इसीलिए वर्तमान राज्य को 'प्रशासनिक राज्य (Administrative State)' कहा जाता है। आशय है कि राज्य के अधिकांश दायित्व जैसे- विकास को गति देना, सामाजिक न्याय की स्थापना करना, समाज के पिछड़े, असहाय, गरीब, महिला, वृद्ध, दिव्यांगों आदि को सुरक्षा, विकास और उनके कल्याण की जिम्मेदारी, देश की आंतरिक सुरक्षा बहाल रखना आदि प्रशासन पूरा करता है।

सतत् विकास (Sustainable Development) : सतत् विकास का आशय विकास की उस प्रक्रिया से है जो भावी पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरी करने की योग्यता को हानि पहुँचाए बिना वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करती है। यह विकास की एक ऐसी रणनीति है जिसमें सभी प्राकृतिक संसाधनों, मानव संसाधनों तथा वित्तीय एवं भौतिक सम्पदा का आर्थिक कल्याण में दीर्घकालिक वृद्धि हेतु प्रबंध करने का भाव विद्यमान है। इसमें एक तरफ प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध शोषण, अव्यवस्थित एवं अन्यायपूर्ण उपयोग की मनाही है तो दूसरी ओर पर्यावरणीय मित्र तकनीक, पर्यावरण-मित्र ऊर्जा स्रोत (LPG & CNG, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा आदि) तथा संसाधनों का व्यवस्थित एवं न्यायपूर्ण उपयोग करने का संदेश है।

विकास प्रशासन (Development Administration) : 'विकास प्रशासन' एक लक्ष्योन्मुखी (Goal oriented), कार्योन्मुखी (Work oriented) एवं परिवर्तनोन्मुखी (Change oriented) प्रशासन है जो प्रशासनिक मूल्यों से युक्त होकर लोक कल्याण की योजनाओं को कुशलतापूर्वक सम्पादित करने का

प्रयास करता है, ताकि जनता की अपेक्षाओं और आकांक्षाओं को पूरा किया जा सके। इस क्रम में जन जागरूकता और जन भागीदारी पर बल दिया जाता है।

विकास प्रशासन वस्तुत: राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक प्रगति के लिए संगठन का मार्गदर्शन करता है। यह मुख्यत: एक कार्योन्मुखी एवं लक्ष्योन्मुखी प्रशासनिक व्यवस्था है, जिसमें *लोक कल्याण हेतु विकास कार्यों को कुशलतापूर्वक सम्पादित करने का भाव निहित है।* संक्षेप में, आधुनिक कल्याणकारी राज्यों में प्रशासन द्वारा कल्याणकारी कार्यों का सम्पादन ही विकास प्रशासन है।

औपनिवेशिक मानसिकता (Colonial Mentality) : प्रशासकों का आम जनता से दूरी बनाए रखना, जन समस्याओं के प्रति उदासीनता, यथास्थिति बहाल रखने का प्रयास अर्थात् बदलाव के प्रति उपेक्षा एवं निष्क्रियता, स्वयं को जनता का स्वामी मानने का भाव, अपने बॉस को खुश करने का प्रयास आदि की मानसिकता को औपनिवेशिक मानसिकता कहा जाता है। ऐसी ही मानसिकता स्वतंत्रता के पूर्व भारतीय प्रशासकों की भी थी जब भारत ब्रिटेन का उपनिवेश था।

ब्रिटिश काल में प्रशासन का मुख्य उत्तरदायित्व कानून और व्यवस्था बनाने एवं राजस्व (लगान) की वसूली बनाये रखने तक ही सीमित था। प्रशासनिक क्रियाओं का संबंध अंग्रेज स्वामियों का हित होता था तथा वे अपने को ब्रिटिश शासन के प्रति उत्तरदायी मानते थे। शासन का मुख्य उद्देश्य हुक्म चलाना था। औपनिवेशिक प्रशासन की सामाजिक कल्याण, आर्थिक विकास, ग्रामीण विकास और राष्ट्र निर्माण के कार्यों में कोई रूचि नहीं थी। यह मानसिकता अभी भी प्रशासकों में देखी जाती है।

नवीन लोक प्रबंधन के मुख्य तत्व (Main elements of New public management)

1. निजी क्षेत्र के प्रबंध शैली एवं प्रबंध व्यवहार को सार्वजनिक क्षेत्र में अपनाना।
2. सार्वजनिक क्षेत्र के अंतर्गत प्रतिस्पर्द्धा को बढ़ाना।
3. लागत में कटौती तथा सेवा और उत्पाद का स्तर बढ़ाना।
4. प्रक्रियाओं के स्थान पर परिणामों पर बल देना।
5. कार्य मापन के स्पष्ट मानक निर्धारित करना।
6. सार्वजनिक क्षेत्र में मितव्ययिता, कार्यक्षमता और प्रभावशीलता [(3 Es) Economy, Efficiency and Effectiveness] को बढ़ावा देना।

अभिवृत्ति (Attitude): रवैया/मनोवृत्ति- किसी भी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह, वस्तु, घटना, स्थिति, संदर्भ या विचार (Idea), मुद्दे (Issues), समाज या देश के प्रति व्यक्ति की सोच, विचार, धारणा (Concept), चैतन्यपूर्ण विश्वास (संज्ञानात्मक घटक), पसंद-नापसंद, सुख-दु:ख का भाव, अभिप्रेरणा (Motivation) (भावनात्मक घटक) तथा अभिवृत्ति विषय के प्रति कार्य करने की तत्परता, क्रिया, व्यवहार (अनुकूल या प्रतिकूल व्यवहार), आदत (व्यवहारात्मक घटक) के समुच्चय के योग या संगठित तंत्र (Organised system) को अभिवृत्ति कहते हैं। जैसे लोगों में परमाणु ऊर्जा, शरणार्थी-समस्या, पाश्चात्य संस्कृति, को-एजुकेशन, पर्यावरण आदि के बारे में खास मनोवृत्ति दिखाई देती है।

नैतिक अभिवृत्ति (Moral attitude): नैतिक अभिवृत्ति नैतिक मूल्यों, नैतिक निर्णयों, नैतिक सिद्धांतों आदि के संबंध में व्यक्ति के ज्ञानात्मक, भावनात्मक एवं क्रियात्मक घटक को इंगित करती है। नैतिक अभिवृत्ति वह है जो किसी विचार, व्यवहार या व्यक्ति का गुणात्मक मूल्यांकन (Qualitative Evalution) करती है। यहां उनके संबंध में अच्छे या बुरे, पसंद या नापसंद का भाव प्रकट किया जाता है। नैतिक अभिवृत्ति का संबंध 'चाहिए' से होता है। जैसे- हम एक व्यक्ति के ईमानदार आचरण की प्रशंसा इस आधार पर करते हैं कि- 'ईमानदारी सर्वोत्तम नीति है।'

राजनीतिक अभिवृत्ति (Political Attitude) : राजनीतिक अभिवृत्ति का संबंध सार्वजनिक जीवन के विभिन्न पक्षों से है। राजनीतिक अभिवृत्ति शासन के स्वरूप (राजतंत्र, धर्मतंत्र, लोकतंत्र आदि) राजनीतिक विचारधाराओं (अराजकतावाद, मार्क्सवाद, समाजवाद आदि) राज्य के उद्देश्य एवं कार्य यथा व्यक्तिवाद,

समाजवाद आदि, राजनीतिक दलों, नेताओं, उनके कार्यक्रमों, नीतियों, राजनीतिक सोच यथा उदारवाद, राजनीतिक रूढ़िवाद (Conservatism), प्रतिक्रियावाद, राष्ट्रवाद, चुनाव प्रणाली, भागीदारी, मतदान व्यवहार, NOTA आदि के संबंध में नागरिकों की विचार प्रक्रिया, औचित्य-अनौचित्य की चेतना, पसंद-नापसंद का भाव एवं व्यावहारिक क्रियाकलापों (मतदान करना, हड़ताल करना, रैली निकालना, सत्याग्रह करना आदि) को इंगित करती है। इस प्रकार यह अभिवृत्ति व्यक्ति के सार्वजनिक जीवन से संबंधित होती है। व्यक्ति का राजनीतिक जीवन एवं क्रियाकलाप सामान्यत: उसकी राजनीतिक अभिवृत्ति से संचालित होती है।

अभिवृत्ति निर्माण के कारक (Factors of attitude formation): माता-पिता एवं परिवार के अन्य सदस्य, विद्यालय के पाठ्यक्रम, सहपाठी एवं शिक्षक, सामाजिक अधिगम, सूचना एवं संचार, समूह सदस्यता, आवश्यकता पूर्ति, सांस्कृतिक कारक आदि।

अनुनयात्मक संचार/विश्वासोत्पादक संवाद (Persuasive Communication): इसकी अभिवृत्ति परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका है। इसकी मूलभूत मान्यता है कि नई सूचनाओं के प्राप्त होने पर लोग अपनी अभिवृत्ति में परिवर्तन करते हैं। अनुनयात्मक संचार अभिवृत्ति परिवर्तन में तभी प्रभावशाली भूमिका निभाता है जब इसके माध्यम से व्यक्ति के स्वीकृत मत या अभिवृत्ति से असंगत या विरोधी नई सूचना दी जाती है। इससे व्यक्ति के मन में अपनी अभिवृत्ति के प्रति संशय उत्पन्न हो जाता है और वह अपनी अभिवृत्ति के प्रति प्रश्न उठाकर सोचने के लिए विवश हो जाता है। ऐसा होने पर उसकी अभिवृत्ति में परिवर्तन होता है।

अनुनयात्मक संचार के चार प्रमुख पक्ष होते हैं-

1. संचारकर्ता अथवा संचार स्रोत की विश्वसनीयता (विशेषज्ञता एवं भरोसा)
2. संचार अथवा संदेश की प्रभावशीलता
3. श्रोता या अभिवृत्ति परिवर्तन के लिए लक्षित व्यक्ति की मन:स्थिति एवं बौद्धिक स्तर
4. संचार का माध्यम

पूर्वाग्रह (Prejudice): तथ्यों के समुचित परीक्षण के पूर्व लिया गया निर्णय पूर्वाग्रह है। किसी समूह या उसके सदस्यों के प्रति निर्मित औचित्य विहीन और अतार्किक नकारात्मक अभिवृत्ति ही पूर्वाग्रह है। इसमें किसी समूह या उसके सदस्यों के प्रति व्यवहार तथ्यों, विवेक, तर्क एवं वास्तविकता पर आधारित न होकर एक पूर्व निर्णय या धारणा से युक्त होकर होता है। पूर्वाग्रह के व्यवहारात्मक घटक के रूप में एक व्यक्ति/समूह अन्य व्यक्तियों या समूहों के प्रति विभेद, अलगाव, उपेक्षा तथा अन्य अप्रिय व्यवहारों को दिखाता है।

रूढ़िवादिता (Stereotypes): रूढ़िवादिता से तात्पर्य विचारों एवं मनोवृत्तियों के उस संयुक्त रूप से होता है जिसके आधार पर हम किसी वस्तु, व्यक्ति, राष्ट्र आदि के बारे में एक ऐसी दृढ़ एवं स्थायी प्रतिमा बना लेते हैं जो गलत तथ्यों (Incorrect fact) तथा अतार्किक चिन्तन (Illogical reasoning) पर आधारित होती है। इसमें व्यक्तिगत भिन्नता पर ध्यान न देकर कुछ तथ्यों का सामान्यीकरण किया जाता है। इसमें कुछ खास विशेषताओं को किसी खास वर्ग के साथ जोड़ दिया जाता है। इसमें परिवर्तन लाना सामान्यत: संभव नहीं होता।

संज्ञानात्मक असंवादिता सिद्धांत (Cognitive Dissonance Theory) : व्यक्ति की दो या दो से अधिक संज्ञानात्मक तत्वों के बीच असंगति के कारण तनाव एवं दुखद अनुभव की जो मानसिक स्थिति उत्पन्न होती है उसे संज्ञानात्मक असंवादिता कहते हैं। ऐसी स्थिति में व्यक्ति अपने इस तनाव को दूर करने के लिए अपनी मनोवृत्ति में परिवर्तन लाकर असंवादिता की स्थिति को दूर करता है।

अभिप्रेरणा (Motivation) : अभिप्रेरणा व्यक्ति की एक ऐसी शक्ति है जो व्यक्ति की कार्यक्षमता को कार्य करने की इच्छा में परिवर्तित करती है तथा उसे कार्य संतुष्टि प्रदान करती है।

राजनीतिक संस्कृति (Political Culture) : राजनीतिक संस्कृति का अर्थ है- किसी समाज की संस्कृति के वे पक्ष जो उसकी राजनीति को प्रभावित करते हैं। राजनीतिक संस्कृति में मुख्यतः उस राष्ट्र के ऐसे मूल्यों, विश्वासों एवं मानकों को सम्मिलित किया जाता है, जो शासक वर्ग, शासन प्रणाली और शासन प्रक्रिया को वैधता प्रदान करते हैं और इसके संदर्भ में व्यक्ति की स्थिति को निर्धारित करते हैं। यह संकल्पना राजनीति को संस्कृति के दृष्टिकोण से देखती है। संस्कृति को राजनीति के दृष्टिकोण से नहीं देखती है।

प्रजातांत्रिक या लोकतांत्रिक मूल्य (Democratic Values) : स्वतंत्रता, समानता, न्याय, भ्रातृत्व, पंथ निरपेक्षता आदि।

संवैधानिक मूल्य (Constitutional Values) : भारतीय संविधान की प्रस्तावना में संवैधानिक मूल्यों का उल्लेख है। ये हैं- सम्प्रभुता, समाजवाद, पंथनिरपेक्षता, लोकतंत्र, भारत राज्य की गणतांत्रिक प्रकृति, न्याय, स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व, मानवीय गरिमा तथा राष्ट्र की एकता एवं अखण्डता। इसके अतिरिक्त अंतर्राष्ट्रीय शांति तथा न्यायसंगत अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था, नागरिकों के लिए मौलिक कर्त्तव्य जिसमें देश-प्रेम, मानवतावाद, पर्यावरण की रक्षा, सद्भावनापूर्ण जीवनयापन, लिंग-समानता, वैज्ञानिक मनोवृत्ति को बढ़ावा जैसे श्रेष्ठ मूल्यों का भी उल्लेख है। ये संवैधानिक मूल्य संविधान के उद्देश्यों को इंगित करते हैं। इनके आलोक में ही संविधान के अन्य उपबंधों की व्याख्या की जाती है तथा सही और गलत का निर्धारण भी किया जाता है। संवैधानिक मूल्य संवैधानिक नैतिकता के आधार हैं। प्रशासनिक क्रियाकलापों में संवैधानिक मूल्य मार्ग-निर्देशन का कार्य करते हैं।

बंधुत्व (Fraternity): बंधुत्व का आशय भाईचारे से है। यहाँ इसका आशय है कि एक ही मातृभूमि के पुत्र होने के कारण सभी नागरिक भाई-भाई हैं। अतः सुख-दुःख में उन्हें एक-दूसरे का साथ निभाना चाहिए। सहायता करना चाहिए। सबकी प्रतिष्ठा व गरिमा का आदर करना चाहिए। बंधुत्व की इस भावना को साकारित करने के लिए समाज में कमजोर वर्गों के प्रति सहानुभूति, सहिष्णुता व करुणा का भाव होना चाहिए। गांधी के अंत्योदय की अवधारणा में भी समाज के सबसे कमजोर व्यक्ति के उत्थान की बात समाहित है।

सिविल सेवा मूल्य (Civil Service Values): निष्पक्षता, सत्यनिष्ठा, ईमानदारी, जवाबदेही, पारदर्शिता, कर्त्तव्यबोध आदि।

नीति संहिता (Code of Ethics): कुछ नैतिक नियमों का समुच्चय होता है जो सदस्यों के व्यवहार एवं निर्णय लेने की प्रक्रिया का मार्गदर्शन करते हैं। यहाँ कुछ मूल्यों, मानकों एवं नियमों का उल्लेख होता है। यहाँ सदस्यों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपने व्यवहार में इसका अनुपालन करें। इसका उद्देश्य सदस्यों को आचरण करते समय नैतिक होने हेतु मार्गदर्शित करना है। यह सदस्य के विवेक (Wisdom) पर निर्भर करता है। नीति संहिताएं मूल्यों पर आधारित होती हैं। उदाहरणस्वरूप, व्यक्ति में संवेदनशीलता एवं ईमानदारी होनी चाहिए।

आचार संहिता (Code of Conduct): आचार संहिता किसी संगठन या विभाग द्वारा अपने सदस्यों के आचरण (संगठन के भीतर और बाहर) को नियमित एवं निर्देशित करने के लिए बनाए गये नियमों का संग्रह है। इसके माध्यम से 'क्या करना है' और 'क्या नहीं करना है', इसकी जानकारी सदस्यों को दी जाती है। इसके उल्लंघन की स्थिति में अनुशासनात्मक कार्यवाही संभव है, दंड दिया जा सकता है। संगठन को सुचारू एवं सुव्यवस्थित रूप से चलाने तथा उसमें अनुशासन बनाये रखने हेतु आचार संहिता में स्पष्ट तौर पर कुछ विशेष कर्त्तव्यों को करने एवं न करने का स्पष्ट निर्देश होता है जैसे- BCCI का Code of Conduct है, जो खिलाड़ी इसका उल्लंघन करते हैं, उन पर कार्यवाही की जाती है।

लोक सेवाओं में अनुशासन एवं कार्यकुशलता बनाये रखने तथा व्यावसायिक मापदण्डों की रक्षा हेतु कर्मचारियों के लिए बनाये गये अनिवार्य नियम 'आचार-संहिता' कहलाता है। लोकप्रशासकों में अनुशासन बनाये रखने, उन्हें जवाबदेह बनाने तथा पदेन शक्तियों का दुरूपयोग रोकने में यह सहायक है।

भारत में लोकसेवकों के आचरण को अनुशासित करने के लिए अनेक प्रावधान किये गए हैं, जैसे- अखिल भारतीय सेवाओं के अधिकारियों हेतु 'अखिल भारतीय सेवाएं (आचरण) नियम 1954', केन्द्रीय कर्मचारियों के लिए 'केन्द्रीय लोक सेवा (आचरण) नियम, 1955', 'द ऑफिशियल सिक्रेसी एक्ट, 1923' आदि।

प्रशासनिक अधिकारियों के लिए आचरण संहिता के कुछ उदाहरण:

1. प्रत्येक लोक सेवक 'संविधान एवं कानून' के प्रावधानों के अनुसार कार्य करेगा।
2. वह विभाग की निर्धारित कार्यप्रणाली एवं प्रशासनिक प्रक्रियाओं का नियमानुसार पालन करेगा।
3. लोक सेवक किसी राजनीतिक दल की सदस्यता ग्रहण नहीं कर सकता, न उनकी गतिविधियों एवं कार्यक्रमों (धरना, प्रदर्शन आदि) में भाग लेगा और न ही किसी पार्टी के पक्ष या विपक्ष में प्रचार करेगा।
4. अपने मकान, वाहन, शरीर तथा वस्त्र इत्यादि पर राजनीतिक दल की प्रचार सामग्री नहीं लगा सकता।
5. कोई भी सरकारी कर्मचारी अपने सरकारी कार्यों के निष्पादन में अशिष्ट व्यवहार नहीं करेगा आदि।

अभिरूचि/अभिक्षमता (Aptitude): विशिष्ट योग्यता/ विशिष्ट सामर्थ्य/ विशिष्ट क्षमता। अभिक्षमता (Aptitude): अभिक्षमता किसी व्यक्ति का किसी विशेष क्षेत्र या कार्य में समुचित प्रशिक्षण एवं उपर्युक्त वातावरण मिलने के बाद ज्ञान एवं कुशलता हासिल करने, सीखने, निपुणता विकसित करने की आंतरिक योग्यता, सामर्थ्य या अंतर्निहित क्षमता को दिखाता है।

सामाजिक नियम (Social Rule) : समाज द्वारा मान्यता प्राप्त व्यवहार या आचरण के नियम ही सामाजिक नियम हैं।

सामाजिक प्रभाव (Social Influence): सामाजिक प्रभाव वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी व्यक्ति या समूह के कार्य (या व्यवहार) एवं अभिवृत्तियाँ (या दृष्टिकोण) दूसरों की उपस्थिति या व्यवहार से प्रभावित होते हैं। जैसे व्यक्तियों पर पारिवारिक परिवेश, शिक्षकों, मित्रों, सहकर्मियों एवं मीडिया का प्रभाव आदि। सामाजिक प्रभाव सकारात्मक या नकारात्मक दोनों हो सकता है, उदाहरणस्वरूप स्वच्छ एवं स्वस्थ भारत के निर्माण हेतु देशभर के गांवों में शौचालयों के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए केन्द्रीय पेयजल एवं स्वच्छता मंत्रालय की ओर से "दरवाजा बंद" अभियान चलाया जा रहा है। अमिताभ बच्चन ने ट्वीट करके लोगों से ''दरवाजा बंद कैम्पेन'' को कामयाब बनाने की अपील की है। उन्होंने लिखा- 'इंडिया' ने खुले में शौच को खत्म करने की कसम खाई है। दरवाजा बंद के माध्यम से साफ-सफाई का संदेश फैलाएं और स्वच्छ भारत को सपोर्ट करें।

'देश का हर गांव हो खुले में शौच से मुक्त,
देखना कैसे हो जाएंगी बीमारियां लुप्त।'

अनुरूपता (Conformity) : समूह या समाज के निर्धारित मानकों एवं नियमों या समूह के अन्य सदस्यों की प्रत्याशाओं के अनुसार व्यवहार करना ही अनुरूपता है। जैसे, यातायात के सुचारू रूप से संचालन हेतु, वाहन चलाते समय ट्रैफिक नियमों का पालन अनुरूपता है।

अनुपालन (Compliance): अनुपालन का आशय वैसी स्थिति से है जब व्यक्ति अन्यों द्वारा दिये गये सुझाव या निवेदन/अनुरोध के अनुरूप, उनके प्रभाव में आकर एक विशिष्ट तरीके से व्यवहार करता है। जैसे, नेताओं द्वारा जनता से वोट देने का अनुरोध करना (ऐसा तब होता है जब किसी सामाजिक समूह का मानक उपस्थित नहीं हो या वह प्रभावी न हो)।

आज्ञाकारिता (Obedience): आज्ञापालन सामाजिक प्रभाव का सबसे प्रत्यक्ष एवं स्पष्ट रूप है। इसमें व्यक्ति प्राधिकारयुक्त व्यक्तियों के प्रभाव में आकर उनके निर्देशानुसार, आज्ञानुसार व्यवहार करता है। आदेश के उल्लंघन की स्थिति में दंड भी मिल सकता है। इसमें भय का तत्व होता है। जैसे स्कूल, संगठन या प्रशासनिक संदर्भ में आज्ञाकारिता का भाव प्रकट करता है।

अनुनय (Persuasion): समझाना-बुझाना, मनाना, राजी करना : अनुनय का आशय एक ऐसी प्रक्रिया (Process) से है जिसमें दूसरों के विचारों, भावनाओं, अभिवृत्तियों, एवं कार्यप्रणाली को सुतर्कों (Good Reasoning) एवं संदेशों (messages) आदि के माध्यम से परिवर्तित कर उन्हें कुछ विशेष मूल्यों, विश्वासों एवं अभिवृत्ति को स्वीकारने धारण करने या कुछ करने या न करने के लिए राजी किया जाता है। अनुनय मनोवृत्ति परिवर्तन, सामाजिक परिवर्तन, भेद-भाव निवारण, समस्या-समाधान आदि का एक प्रमुख कारक है।

सामाजिक बुद्धि (Social intelligence): सामाजिक संबंधों को समझने, अपने से बड़े, बुजुर्गों, बच्चों, महिलाओं एवं समाज के कमजोर वर्गों के प्रति समुचित व्यवहार करने, सामाजिक परिस्थितियों के साथ प्रभावपूर्ण समायोजन करने तथा समाजिक समस्याओं और मुद्दों का सहयोगपूर्ण सकारात्मक समाधान करने की योग्यता ही सामाजिक बुद्धि है।

संवेगात्मक बुद्धि (Emotional Intelligence) : संवेगात्मक बुद्धि से तात्पर्य व्यक्ति विशेष की उस समग्र क्षमता से है, जो उसे उसकी विचार प्रक्रिया का उपयोग करते हुए *अपने तथा दूसरों के संवेगों* को *पहचानने, समझने*, अपने आप को *अभिप्रेरित करने* तथा अपने संबंधों में *संवेगों को प्रबंधित* करते हुए वांछित अनुक्रिया करने में सक्षम बनाता है। संक्षेप में, यह संवेगों एवं आवेगों का बौद्धिक नियमन एवं प्रबंधन है। इसमें हृदय (दिल) और मस्तिष्क (दिमाग) के मध्य संतुलन एवं सामंजस्य का भाव है ताकि विभिन्न परिस्थितियों में यथोचित व्यवहार हो सके। गोलमैन का मानना है कि जीवन की सफलताओं में केवल 20 प्रतिशत योगदान बुद्धि लब्धि का है, जबकि 80 प्रतिशत योगदान सांवेगिक बुद्धि का है।

नैतिक भावना (Ethical Feeling): उचित कर्म करने से जो आनंद एवं संतोष की अनुभूति होती है तथा अनुचित कर्म करने से विषाद या पश्चाताप की अनुभूति होती है, उसी को नैतिक भावना कहते है।

सार्वजनिक सेवा (Public Service): ऐसी सेवा जिससे सामान्य व्यक्ति का कल्याण एवं हित जुड़ा हुआ हो।

अशुभ (Evil) : नैतिक दृष्टिकोण से जो नहीं होना चाहिए, वह यदि हो तो वह अशुभ है। अशुभ दु:खपूर्ण शारीरिक एवं मानसिक अवस्था को इंगित करता है। जैसे- चोरी, बाढ़, भूकंप आदि।

सुखवाद (Hedonism) : 'सुखवाद' वह परिणाम सापेक्ष नैतिक सिद्धान्त है जिसके अनुसार सुख प्राप्ति ही जीवन का चरम लक्ष्य है। जो कर्म सुख की प्राप्ति में सहायक है, वह शुभ है, जबकि जो इसमें बाधक है, वह अशुभ है।

मनोवैज्ञानिक सुखवाद (Psychological Hedonism) : 'मनोवैज्ञानिक सुखवाद' वह नैतिक सिद्धान्त है जिसके अनुसार मनुष्य स्वभावतः सुख-प्राप्ति की इच्छा से प्रेरित होकर कार्य करता है।

नैतिक सुखवाद (Ethical Hedonism) : 'नैतिक सुखवाद' वह नैतिक सिद्धान्त है जिसके अनुसार सुख-प्राप्ति ही मनुष्य के जीवन का ध्येय होना चाहिए। केवल सुख ही अपने-आप में शुभ एवं वांछनीय है। नैतिक सुखवाद मनुष्य के कर्त्तव्य निर्धारण (क्या करना चाहिए?) के लिए मानदंड प्रस्तुत करता है जबकि मनोवैज्ञानिक सुखवाद यह बताता है कि मनुष्य क्या करना चाहता है?

सुखवाद का विरोधाभास (Paradox of Hedonism) : सिजविक के अनुसार, यदि सुख पाने की प्रवृत्ति अधिक प्रबल हो तो फिर सुख की प्राप्ति नहीं हो पाती, यही सुखवाद का विरोधाभास है। सुख पाने का सबसे अच्छा तरीका सुख को भूल जाना है।

स्वार्थवाद (Egoism) : 'स्वार्थवाद' वह विचारधारा है जिसके अनुसार व्यक्ति का अपना हित ही महत्वपूर्ण है। अत: जो कर्म कर्त्ता के व्यक्तिगत लाभ में सहायक है वह कर्म उचित है और जो इसमें बाधक है, वह अनुचित है।

नैतिक स्वार्थवाद (Ethical Egoism) : 'नैतिक स्वार्थवाद' वह सिद्धान्त है जिसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को केवल अपने हित या कल्याण के लिए कार्य करने चाहिए।

उपयोगितावाद (Utilitarianism) : 'उपयोगितावाद' वह परिणाम सापेक्ष नैतिक सिद्धांत है जिसके अनुसार 'अधिकतम व्यक्तियों का अधिकतम सुख' ही नैतिकता का मानदण्ड है, अर्थात् जो कर्म इस लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक है वह कर्म उचित है और जो इसमें बाधक है वह कर्म अनुचित है। बेन्थम, जे.एस. मिल आदि इसके समर्थक हैं।

कर्म संबंधी उपयोगितावाद (Action Utilitarianism) : 'कर्म संबंधी उपयोगितावाद' वह नैतिक सिद्धान्त है जिसके अनुसार वे कर्म उचित हैं जो अधिकतम व्यक्तियों के अधिकतम सुख में सहायक है। इसके समर्थक बेन्थम आदि हैं।

नियम संबंधी उपयोगितावाद (Rule Utilitarianism) : 'नियम संबंधी उपयोगितावाद' वह नैतिक सिद्धान्त हैं जिसके अनुसार वही नियम उचित है जिसके अनुसार कर्म करने पर अधिकतम व्यक्तियों को अधिकतम सुख की प्राप्ति होती है। यह सिद्धान्त किसी विशेष कर्म की अधिकतम उपयोगिता के स्थान पर सामान्य नियम की अधिकतम उपयोगिता को महत्व देता है।

आत्मपूर्णतावाद (Perfectionism) : इसके अनुसार बुद्धि और भावना दोनों ही मानव व्यक्तित्व के आवश्यक अंग हैं और व्यक्तित्व का विकास कर उसे पूर्ण बनाना ही जीवन का चरम लक्ष्य है। इसके लिए न तो कांट की भांति इच्छाओं एवं वासनाओं का दमन कर बुद्धि के आदेशों के अनुसार आचरण करना है और न ही सुखवाद की भांति इच्छाओं की पूर्ति मात्र के लिए प्रयास करना है। यहाँ इच्छाओं का दमन नहीं बल्कि उनका परिमार्जन एवं परिष्करण कर बुद्धि के द्वारा उनके नियमन/नियंत्रण पर बल दिया गया है। इस रूप में आत्मपूर्णतावाद व्यक्तित्वपूर्णता का नीतिशास्त्र है।

अंत:प्रज्ञावाद (Intuitionism) : 'अंत:प्रज्ञावाद' वह नैतिक सिद्धान्त है जिसके अनुसार मनुष्य अपने भीतर स्थित एक विशेष मानसिक शक्ति 'अंत:प्रज्ञा' द्वारा कर्मों या नियमों के उचित या अनुचित होने का साक्षात् ज्ञान, परिणाम पर विचार किए बिना ही प्राप्त कर लेता है। इसके लिए किसी तर्क या प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती। बटलर, जी.ई. मूर आदि इसके समर्थक हैं।

सर्वोदय (Sarvodaya) : गाँधी मतानुसार समाज के सभी वर्गों (अमीर-गरीब, स्त्री-पुरुष आदि) के जीवन के सभी पक्षों (सामाजिक, आर्थिक, नैतिक, आध्यात्मिक आदि) का सर्वांगीण उत्थान ही सर्वोदय है। इसमें गुणात्मक एवं मात्रात्मक उत्थान की बात निहित है।

अंत्योदय (Antyodaya): इसका शाब्दिक अर्थ है- 'समाज के अन्तिम छोर पर स्थित, उपेक्षित, गरीब का भी उदय'। समाज के समग्र विकास और सर्वोदय की अवधारणा को साकारित करने के लिए आवश्यक है कि किन्हीं करणों से समाज के अंतिम छोर पर स्थित कमजोर, दुर्बल व्यक्ति का भी उत्थान हो, समाज में उसकी भागीदारी हो। अगर एक जंजीर (Chain) की एक कड़ी भी ढीली हो जाए या टूटी हो तो फिर जंजीर (Chain) बेकार होने लगता है। इसी प्रकार का समाज को कोई सदस्य यदि दीन-हीन स्थिति में हो तो फिर वह समाज पूर्ण और समग्र समाज नहीं कहा जा सकता। वर्णमाला में छूटा एक अक्षर पूर्ण वर्णमाला नहीं माना जा सकता है। ठीक इसी प्रकार समाज के अंतिम पायदान पर स्थित व्यक्ति के उत्थान के बिना समग्र एवं पूर्ण समाज नहीं हो सकता। गाँधी यह मानते है कि प्रत्येक व्यक्ति में आत्मा के रूप में ईश्वरीय अंश विद्यमान है अत: यदि कोई व्यक्ति दु:खी, दरिद्र एवं बेहाल है तो उस अंश में सर्वोदय अधूरा रहेगा। अत: सर्वोदय के लिए अंत्योदय आवश्यक है। अंत्योदय की अवधारणा में संवेदनशीलता, परानुभूति , एकात्मवाद, लोकमंगल की कामना और सर्वेभवन्तु सुखिन: का भाव विद्यमान है।

न्यासधारिता (Trusteeship): गाँधी समाज में आर्थिक विषमता को दूर कर आर्थिक न्याय की स्थापना हेतु ट्रस्टीशिप का समर्थन करते हैं जिसके अनुसार पूँजीपति अपनी अतिरिक्त संपत्ति को समाज की धरोहर मानकर, स्वयं को उसका संरक्षक मानकर, उसका उपयोग समाज-हित में करेगा। ट्रस्टीशिप की अवधारणा स्वैच्छिक है जबकि वर्तमान में स्वीकार्य कॉरपोरेट सामाजिक दायित्व (CSR) की अवधारणा में इसे बाध्यकारी बना दिया गया दिया गया है।

एकादश व्रत (Ekadas Vrata): गाँधी मतानुसार सत्याग्रही के लिये 11 व्रतों का पालन आवश्यक है- सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य, शारीरिक श्रम, अस्वाद, अभय, सर्वधर्म समभाव, स्वदेशी एवं अस्पृश्यता निवारण। निजी और सार्वजनिक संबंधों में नैतिकता को बढ़ावा देने में ये उपयोगी हैं। एकादश व्रत गाँधीजी के नैतिक दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त हैं।

सत्याग्रह (Satyagraha): गाँधी मतानुसार सत्य की विजय हेतु किया जाने वाला नैतिक एवं आध्यात्मिक संघर्ष ही सत्याग्रह है। अहिंसात्मक साधनों से अधर्म को विरोध सत्याग्रह है। इसमें अहिंसा के आधार पर असत्य पर आधारित बुराई एवं अन्याय का विरोध किया जाता है। इसमें विरोधी को अन्दर से यह महसूस

कराया जाता है कि उसका मार्ग असत्य एवं बुराई का मार्ग है। ऐसा करके उसकी सुषुप्त आत्मा को जागृत कर उसका हृदय परिवर्तन कराया जाता है।

सत्याग्रह का प्रयोग तभी किया जाना चाहिए जब बातचीत का जरिया पूरी तरह से असफल हो जाए और विरोधी/पापी/अत्याचारी अपनी गलती मानने से पूर्णतया इंकार कर दे।

सात सामाजिक पाप (Seven Social Evils/Sins): गाँधी जी ने 'यंग इंडिया' (1925) में सात सामाजिक पापों के बारे में बताया है जिसके कारण मनुष्य व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन में अनैतिक गतिविधियों में लिप्त होता है।

1. सिद्धान्त विहीन राजनीति (Politics without principles)
2. बिना काम के धन (Wealth without work)
3. बिना अंतःकरण के सुख (Pleasure without conscience)
4. चरित्र रहित ज्ञान (Knowledge without character)
5. नैतिकता विहीन व्यापार (Commerce without morality)
6. मानवता विहीन विज्ञान (Science without humanity)
7. त्यागरहित पूजा (Worship without sacrifice)

महात्मा गाँधी के द्वारा 'यंग इंडिया' में वर्णित उपरोक्त सात सामाजिक पापों की विपरीत स्थिति को हम नैतिकता के सारतत्व के रूप में देख सकते हैं। निजी और सार्वजनिक जीवन में नैतिकता को बढ़ावा देने के लिए इन सात साामाजिक पापों की विपरीत स्थिति को स्वीकार करना होगा।

सात पापों की विपरीत स्थिति:

1. नीतियुक्त राजनीति
2. श्रम आधारित धन
3. अंतःकरणयुक्त सुख
4. चरित्रयुक्त ज्ञान
5. नैतिकतायुक्त व्यापार
6. मानवता-उन्मुख विज्ञान
7. त्यागयुक्त पूजा

गाँधी का मंत्र/जंतर (Gandhi's Talisman): शासन-प्रशासन में नैतिकता की स्थापना तथा लोक कल्याणकारी राज्य के स्वप्न को मूर्तरूप देने हेतु महात्मा गाँधी द्वारा सन् 1948 में दिया गया निम्नांकित **जन्तर** (मंत्र) बहुत लोकप्रिय है— *"मैं तुम्हें एक जन्तर देता हूँ। जब भी तुम्हें संदेह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे तो यह कसौटी आजमाओ :*

जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो उसकी शक्ल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा? अर्थात् क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा संदेह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।"

सुपर-ईगो/पराहम् (Super Ego): फ्रायड द्वारा वर्णित सुपर-ईगो व्यक्तित्व का नैतिक पक्ष है जो आदर्श को प्रस्तुत करता है। यह सामाजिक आदर्शों, मान्यताओं एवं मूल्यों के अनुरूप कार्य करने के लिए प्रेरित करता है ताकि पूर्णता की प्राप्ति हो सके।

सूचना का अधिकार (Right To Information (RTI)): इसका आशय है- नागरिकों का लोक प्राधिकरणों से सूचना प्राप्त करने का अधिकार। सरकारी कार्यों, निर्णयों एवं उसके निष्पादन से संबंधित फाइलों एवं दस्तावेजों तक नागरिकों एवं गैर-सरकारी संगठनों की औचित्यपूर्ण स्वतंत्र पहुँच होनी चाहिए। इससे जनसामान्य तक सरकारी सूचनाओं की पहुँच आसान होगी। इसके अंतर्गत नागरिकों को सरकारी दस्तावेजों एवं अभिलेखों का निरीक्षण करना या उनकी प्रामाणिक प्रतिलिपि इलेक्ट्रॉनिक या प्रिंटेड तरीके से प्राप्त करने का अधिकार है। यह सरकारी क्रियाकलापों में गोपनीयता के स्थान पर खुलेपन एवं पारदर्शिता की मांग करता है। इससे शासन में पारदर्शिता आती है और भ्रष्टाचार पर नियंत्रण लगाने में आसानी होती है। यह नागरिक सशक्तिकरण, सुशासन एवं जन केन्द्रित शासन की स्थापना में सहायक है। इससे शासन में पारदर्शिता, जवाबदेहिता एवं अनुक्रियाशीलता आती है।

परन्तु ऐसी सूचना जिसके सार्वजनिक होने से भारत की सुरक्षा, संप्रभुता, एकता और अखण्डता तथा विदेशी संबंध नकारात्मक रूप से प्रभावित होते हैं, वे RTI से मुक्त हैं। पुनः व्यापारिक गोपनीयता, बौद्धिक सम्पदा, विदेशी सरकार से प्राप्त सूचना, किसी व्यक्ति के जीवन एवं शारीरिक सुरक्षा को खतरे में डालने वाली सूचनाएँ भी RTI से मुक्त हैं।

शासन व्यवस्था में ईमानदारी (Probity in Governance): प्रशासन का उद्देश्य लोक कल्याण है और लोक प्रशासन उन उद्देश्यों की प्राप्ति का साधन है। ऐसी स्थिति में उद्देश्य प्राप्ति हेतु शासन व्यवस्था में ईमानदारी का होना आवश्यक है। यदि साधन अपवित्र हो तो साध्य भी अपवित्र हो जाता है। येन-केन-प्रकारेण अपने लक्ष्यों को प्राप्त कर लेना ही ईमानदारी नहीं है बल्कि लक्ष्यों की प्राप्ति मूल्यपूर्ण एवं नैतिक ढंग से हो, यह आवश्यक है। बिना ईमानदारी के न तो कुशल एवं प्रभावी शासन प्रणाली विकसित हो सकती है और न ही देश का समुचित सामाजिक एवं आर्थिक विकास सुनिश्चित हो सकता है। इसके लिए आवश्यक है कि लोक संगठन के कार्य करने का तरीका, पद्धति, निर्णय प्रक्रिया एवं कार्य व्यवहार में सामाजिक एवं नैतिक मानकों का उपयोग हो।

ईमानदारी का दार्शनिक आधार (Philosophical basis of Probity): नोलन कमेटी के द्वारा स्वीकृत सात मूल्य, जैन दर्शन के त्रिरत्न और बौद्धों का अष्टांगिक मार्ग, गीता का निष्काम कर्म एवं स्वकर्त्तव्य पालन, काण्ट का 'कर्त्तव्य कर्त्तव्य के लिए' की अवधारणा, बोधिसत्व की प्राणी मात्र के प्रति मंगलकामना का भाव, नैतिकता का स्वर्णिम सूत्र कि 'हमें दूसरों के साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिए जैसा कि हम दूसरों से स्वयं के प्रति अपेक्षा करते हैं।', भ्रष्ट आचरण की स्थिति में त्वरित एवं प्रभावी कार्यवाही की पारदर्शी व्यवस्था, सुशासन एवं नैतिक शासन की स्थापना आदि को ईमानदारी के दार्शनिक आधार के रूप में लिया जा सकता है।

नैतिक प्रबंधन (Ethical Management): निर्णय प्रक्रिया और कार्य प्रणाली में नैतिक पक्षों का समावेश करके अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु संसाधनों का समुचित प्रबंधन नैतिक प्रबंधन कहलाता है। नैतिक प्रबंधन में संवेदनशीलता, पारदर्शिता, अनुक्रियाशीलता, ईमानदारी आदि के तत्व होते हैं। संक्षेप में निजी और सरकारी संस्थाओं एवं संगठनों के सदस्यों में नैतिक मूल्यों के प्रति जागरूकता एवं आचरण नैतिक प्रबंधन को दर्शाता है।

नैतिकता का प्रबंधन (Management of Ethics): किसी सरकारी या निजी संगठन या संस्था में सदस्यों के व्यवहार में अनुशासन लाने, अपने उत्तरदायित्व का निर्वहन करने, कुछ कर्मों को करने और कुछ कर्मों को न करने संबंधी दिशा-निर्देश, नीति एवं आचरण संहिता को क्रियान्वित करना नैतिकता का प्रबंधन कहलाता है, जैसे- सिविल सेवकों के आचरण में अनुशासन लाने हेतु कोड ऑफ कंडक्ट का निर्माण।

भेदभाव और अधिमानी बरताव (Discrimination and Preferential Treatment): भेदभाव के दो पक्ष हैं- पूर्वाग्रह आदि के कारण किसी व्यक्ति, समुदाय या संगठन आदि के प्रति किया जाने वाला अनुचित व्यवहार नकारात्मक भेदभाव है जैसे- जाति भेद, लिंग भेद, नस्ल भेद, भाई-भतीजावाद, तरफदारी आदि, जबकि किन्हीं कारणों से सामाजिक, शैक्षणिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों के हित में कुछ विशेष प्रावधान करना सकारात्मक भेदभाव है। सकारात्मक भेदभाव में समाज के पिछड़े वर्गों को सशक्त करने और उन्हें प्रतिस्पर्धा के स्तर तक लाने के लिए उनके हित में कुछ विशेष आचरण किया जाता है। इसका उद्देश्य सामाजिक न्याय एवं समावेशी विकास के लक्ष्य की प्राप्ति और बंधुत्व की अवधारणा को साकारित करना है, जैसे- सामाजिक, शैक्षणिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों को विशेष सुविधाएं उपलब्ध कराना।

किसी विशेष पद, स्थिति, महत्ता, उपयोगिता आदि के कारण किसी व्यक्ति, संगठन, देश आदि को कार्य एवं व्यवहार में वरीयता देना/विशेष महत्व देना अधिमानी बरताव को दर्शाता है।

वैयक्तिक नैतिकता (Personal Ethics): अपने व्यक्तिगत जीवन में हम जिन मूल्यों एवं मानदण्डों को स्वीकार करते हुए आचरण करते हैं उसे वैयक्तिक नैतिकता कहते हैं। इसमें स्वेच्छा का भाव होता है, परिणामस्वरूप विभिन्न व्यक्तियों में इस संदर्भ में भिन्नता दिखाई देती है।

व्यावसायिक नैतिकता (Professional Ethics): किसी संस्था, संगठन या व्यवसाय में सदस्यों के कार्य-व्यवहार को नियमित और निर्देशित करने हेतु मूल्यों, सिद्धांतों, नियमों एवं दिशा-निर्देशों की व्यवस्था ही व्यावसायिक नैतिकता है। इनके अनुसार आचरण करना उचित है जबकि इनका उल्लंघन अनुचित है।

सामाजिक पूंजी (Social Capital): सामाजिक पूंजी का आशय व्यक्तियों के पारस्परिक सामाजिक संबंधों से है। यह किसी विशेष समाज में रहने और काम करने वाले लोगों के बीच संबंधों का नेटवर्क है जो समाज को प्रभावी ढंग से कार्य करने में सक्षम बनाती है। सामाजिक पूंजी सामाजिक संबंधों के माध्यम से समाज को समग्र रूप से लभान्वित करती है। सामाजिक पूंजी के मुख्यत: तीन आयाम हैं- प्रथम है ***'बॉन्डिंग'*** अर्थात् जुड़ाव। यह साझा हितों एवं उद्देश्यों वाले ***समूह के भीतर*** बनायी गयी पूंजी को इंगित करता है। दूसरा है, ***'ब्रिजिंग'*** अर्थात् दो से ज्यादा का नेटवर्क। इसमें ***दो या दो से अधिक समूहों के व्यक्ति***, समान लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु मिलकर काम करते हैं, जैसे- स्थानीय पुलिस एवं RWA। तीसरा है ***'लिंकेज'*** अर्थात् अनुबंधन, एक कड़ी का दूसरी कड़ी के साथ जुड़ाव। सामाजिक पूंजी के इन तीन प्राथमिक रूपों में 'बॉन्डिंग' अर्थात् जुड़ाव जो विभिन्न समाजों के संदर्भ में अलग-अलग है वहाँ सामाजिक पूंजी के अन्य रूप 'लिंकेज' की कमी है। इसका अर्थ है कि विभिन्न जातियों एवं वर्गों में 'नेटवर्किंग' नहीं है या उनमें आपस में समन्वय की कमी है। आज विभिन्न समाजों में सेतु बनाने की जरूरत है। भारत के संबंध में 'ब्रिजिंग' (एक दूसरे से नेटवर्क) सामाजिक पूंजी की अधिक जरूरत है। 'समृद्धि की कुंजी आर्थिक पूंजी में निवेश नहीं, सामाजिक पूंजी में निवेश है'।

मानव पूँजी (Human Capital): मानव पूंजी का आशय किसी एक देश में, किसी समय विशेष में उपलब्ध कौशल और विशेषज्ञता के भण्डार (Stock of Skill and expertise) से है। यह उन इंजीनियरों, डॉक्टरों, अध्यापकों, विभिन्न क्षेत्र के जानकारों एवं श्रमिकों के कौशल और निपणुता का कुल योग है, जो उत्पादन की प्रक्रिया को गति देते हैं और साथ ही देश के आर्थिक, राजनीतिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

मानव पूंजी के स्टॉक में होने वाली वृद्धि की प्रक्रिया को मानव पूंजी निर्माण कहते हैं। भौतिक पूंजी के निर्माण, उत्पादन प्रक्रिया में नवाचार और देश की समृद्धि में मानव पूंजी की महत्वपूर्ण भूमिका है।

शिक्षा और स्वास्थ्य पर व्यय, सूचना एवं संचार पर व्यय, कौशल विकास कार्यक्रम, व्यावसायिक प्रशिक्षण, नौकरी के साथ प्रशिक्षण आदि मानव पूंजी निर्माण के महत्वपूर्ण निर्धारक हैं।

सामाजिक सेवाएं (Social Services): ऐसी सेवाएं जो नागरिकों के जीवन स्तर (Quality of Life) को उन्नत करने के लिए राज्य की ओर से जुटाई जाती हैं। इनमें उन सेवाओं का विशेष स्थान है जिनका प्रबंध निर्धन और निर्बल वर्गों के हित में किया जाता है, जैसे कि असहाय बच्चों, बूढ़ों और स्त्रियों की स्वास्थ्य, रक्षा तथा जनसाधारण के लिए सस्ती शिक्षा, परिवहन, मनोरंजन इत्यादि की यथेष्ट व्यवस्था।

सामाजिक मूल्य (Social Value): सामाजिक दृष्टिकोण से जो वांछनीय हैं, समाज में हम जिनको प्राप्त करना चाहते हैं, जिसकी ओर अग्रसारित होना चाहते हैं, वे सामाजिक मूल्य हैं, जैसे- लिंग समानता, अपने से बड़ों की इज्जत करना आदि। सामाजिक मूल्य मानव व्यवहार को दिशा प्रदान करते हैं और साथ-ही-साथ सामाजिक आदर्श एवं उद्देश्य भी हैं। इस रूप में सामाजिक मूल्य साध्य हैं, जबकि सामाजिक मानदंड इनकी प्राप्ति के साधन हैं।

सामाजिक मानदंड (Social Norms): सामाजिक मानदंड समाज द्वारा अनुमोदित वे नियम या प्रतिमान हैं, जो समाज में लोगों के व्यवहारों का दिशा-निर्देशन करते हैं, समाज में विपथगामी व्यवहार को नियंत्रित करते हैं तथा सामाजिक व्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने में सहायता करते हैं। किसी विशिष्ट सामाजिक परिस्थिति में किस प्रकार का व्यवहार उपयुक्त है, इसका निर्धारण सामाजिक मानदंडों के द्वारा होता है। जनरीतियाँ, प्रथाएँ, परम्पराएं आदि सामाजिक मानदंडों के ही विभिन्न रूप हैं। प्रत्येक मानदंड के साथ दंड एवं पुरस्कार की अवधारणा भी जुड़ी रहती है।

नैतिक सापेक्षतावाद (Moral Relativism): वह नैतिक दृष्टिकोण जिसमें किसी भी आदर्श या मूल्य प्रणाली (Value System) को अंतिम रूप से या निरपेक्ष रूप से नहीं माना जाता बल्कि यह स्वीकार किया जाता है कि कोई भी मूल्य या आदर्श किसी विशेष सामाजिक एवं ऐतिहासिक संदर्भ में ही उचित होते हैं। अत: किसी भी मूल्य या आदर्श को सार्वभौम एवं निरपेक्ष रूप से स्वीकार नहीं किया जा सकता है। यहां वैकल्पिक मूल्यों के प्रति भी सहिष्णुता का भाव दिखाई देता है। उदारवाद के समर्थक नैतिक सापेक्षतावाद में विश्वास करते हैं।

नैतिक पूर्णसत्तावाद (Moral Absolutism): वह नैतिक दृष्टिकोण जिसमें किसी आदर्श या मूल्य प्रणाली (Value System) को सार्वभौम एवं निरपेक्ष रूप से प्रामाणिक मानते हुए व्यक्ति और समाज के चरित्र को उसके आधार पर एवं उसके अनुरूप ढालने की मांग की जाती है। इसमें किसी व्यक्ति या समूह को किसी वैकल्पिक आदर्श पर विचार की आवश्यकता स्वीकार नहीं की जाती। समुदायवाद (Communitarianism) के समर्थक इसे स्वीकार करते हैं।

सत्यनिष्ठा (Integrity): सिविल सेवा का एक महत्वपूर्ण आधारभूत मूल्य सत्यनिष्ठा है। *भय, दबाव, प्रलोभन, पूर्वाग्रह एवं पाखंड से मुक्त होकर, संवैधानिक मूल्यों के प्रति निष्ठा रखते हुए, सार्वजनिक हित में अपने कर्तव्यों का दृढ़तापूर्वक पालन करना ही सत्यनिष्ठा (Integrity) है।* सत्यनिष्ठा को नैतिक सिद्धांतों की दृढ़ता, निर्दोष चरित्र, स्पष्टता, ईमानदारी एवं निष्कपट रूप से कर्तव्य पालन के पर्यायवाची के रूप में परिभाषित किया गया है। स्वच्छ, निष्पक्ष एवं प्रभावी प्रशासन की स्थापना सच्चरित्रता के बिना संभव नहीं है। सच्चरित्रता का विपरीत शब्द भ्रष्टाचार है। पद और स्थिति (Status) के अनुसार अपने दायित्वों को निभाने में ईमानदारी, विश्वसनीयता एवं प्रतिबद्धता होनी चाहिए। सार्वजनिक पद पर बैठे लोगों को ऐसा कोई कार्य नहीं करना चाहिए कि वे वित्तीय या किसी अन्य रूप में उनका अन्य व्यक्तियों या संगठनों के प्रति कृतज्ञता पैदा हो और बाध्यतावश उनका उन संगठनों के हित में कार्य करना पड़े या उनका सरकारी कार्य निष्पादन (Performance) प्रभावित हो *(निर्णय एवं कार्य पर नकारात्मक असर न हो)।* इस रूप में सत्यनिष्ठा का एक पक्ष यह भी होता है कि सिविल सेवकों को सार्वजनिक हितों को वरीयता देनी चाहिए।

व्यावसायिक सत्यनिष्ठा (Professional Integrity) : क्षेत्र या व्यवसाय विशेष में स्वीकृत मूल्यों, मानकों एवं निर्देशों आदि के अनुसार कार्य करते हुए अपने लक्ष्यों की प्राप्ति करने का प्रयास ही व्यावसायिक सत्यनिष्ठा है, जैसे- वर्तमान में अनेक मेडिकल कंपनियाँ नई दवाओं की खोज हेतु गुपचुप तरीके से लोगों पर क्लीनिकल ट्रायल करती हैं। यह व्यावसायिक सत्यनिष्ठा का उल्लंघन है। पुनः मरीजों को वैसी दवाएँ लेने एवं टेस्ट के लिए सलाह देना जो उनके लिए आवश्यक नहीं है। व्यावसायिक सत्यनिष्ठा को सुनिश्चित करने के लिए आचार-संहिता, नीति-संहिता, शपथ आदि की प्रभावी भूमिका हो सकती है।

पारदर्शिता (Transparency) : पारदर्शिता का अर्थ है- निर्णय-निर्माण प्रक्रिया में खुलेपन का होना। यह लोगों को शासन में सहभागी होने का अवसर प्रदान करता है। पारदर्शिता वास्तव में भ्रष्टाचार के विरुद्ध एक निवारक साधन/युक्ति है। पारदर्शिता होने पर जबावदेयता का निर्धारण आसान हो जाता है। प्रशासनिक पारदर्शिता से तात्पर्य है- सरकार के क्रिया-कलापों के बारे में आम-जनता को आसानी से स्पष्ट जानकारी की उपलब्धता का होना। यह सुशासन से जुड़ी अवधारणा है। नागरिक अधिकार पत्र, सूचना का अधिकार, उपभोक्ता संरक्षण कानून, लोक सेवा गारंटी अधिनियम, ई-गवर्नेंस आदि के कारण प्रशासनिक पारदर्शिता में वृद्धि हो रही है।

दृढ़ता या जुझारूपन (Perseverance): इसका आशय है- बाधाओं, चुनौतियों, समस्याओं, परेशानियों, विकट परिस्थितियों के बावजूद अपने उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु धैर्य एवं विवेकपूर्वक प्रयासरत रहना। अपनी आंतरिक प्रेरणा, आशावादी मानसिकता एवं 'हम होंगे कामयाब' की भावना के साथ सतत् लक्षित दिशा में कार्यरत रहना ही दृढ़ता है। 'मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।' सरकारी नीतियों एवं कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के क्रम में कई बार समस्यायें आती हैं और विरोध एवं असहयोग का भी भाव उभरता है। ऐसी स्थिति में बिना हार माने, लोगों की अज्ञानता एवं अंधविश्वास को दूर करते हुए उन्हें उस कार्यक्रम में सहभागी बनाना और यह विश्वास दिलाना कि यह सब उन्हीं के हित में किया जा रहा है। जैसे-ओ॰ पी॰ चौधरी द्वारा नक्सल प्रभावित दंतेवाड़ा जिले में शुरूआती विरोध के बावजूद उन्हीं लोगों के सहयोग से विद्यालय प्रारंभ करना।

अनामता (Anonymity): अनामता का साधारण अर्थ है- किसी की पहचान या नाम छुपाना। अनामता का सिद्धांत यह मानता है कि लोक सेवकों को सरकारी पद से नाम कमाने या प्रतिष्ठा पाने का प्रयास नहीं करना चाहिए। अखिल भारतीय सेवा (आचरण) अधिनियम-1954 में प्रावधान किया गया है कि लोक सेवा आधिकारियों को आत्म प्रचार, राजनीतिक दल, नेताओं एवं उनकी गतिविधियों से तटस्थ रहना चाहिए।

अनामता का तात्पर्य उस स्थिति से है जिसमें लोक सेवक मंत्री को उसके कार्यों में परामर्श एवं सहायता प्रदान करते हैं तथा मंत्री के निर्देशन में विभाग का कार्य सम्पन्न करते हैं, परन्तु वे ऐसे कार्यों के लिए संसद के प्रति उत्तरदायी नहीं होते हैं। संसद के प्रति विभागीय कार्यों के लिए मंत्री उत्तरदायी

होते हैं। अधिकारी जनता के साथ-साथ मंत्री के प्रति भी उत्तरदायी होते हैं। इस प्रकार अधिकारियों की स्थिति पर्दे के पीछे रहकर कार्य करने वाले के समान होती है। वे किसी कार्य का स्वयं श्रेय नहीं लेते, वे अपने कार्य का प्रचार-प्रसार करके नाम कमाने एवं प्रतिष्ठा पाने का प्रयास नहीं करते।

सेवा की भावना (Spirit of service): सेवा की भावना ऐसी मन:स्थिति या मनोवृत्ति को इंगित करता है जिसमें कोई कार्य व्यक्तिगत लाभ या स्वार्थपूर्ति के भाव से न करके इस भाव से भी किया जाता है कि यह उसकी नैतिक जिम्मेदारी है। लोक सेवा में इसका आशय है कि वेतन, सेवा-शर्तों, क्षेत्र आदि का ध्यान न रखते हुए इस भावना से काम करना कि मैं अपने पद की शक्तियों एवं सरकारी योजनाओं का अधिकतम उपयोग समाज कल्याण हेतु कैसे कर सकता हूँ। इसमें कर्त्तव्यबोध का भाव निहित है। सेवा की गुणवत्ता इसी भावना पर निर्भर करती है। यदि प्रशासक का उद्देश्य सेवा की भावना के बजाय स्वार्थों की सिद्धि हो जाय तो फिर योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन एवं संबंधित लक्ष्यों की पूर्ति नहीं हो सकती। तुलसीदास जी ने भी कहा है कि-

"परहित सरिस धरम नहिं भाई।
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।।"

अर्थात् दूसरों की सेवा करने से बड़ा कोई धर्म नहीं है तथा दूसरों को पीड़ित करने जैसा कोई पाप नहीं है [उत्तरकांड]।

नियम और विनियम (Rules and Regulations): नियम और विनियम का नीतिशास्त्र में साधारणतया एक ही अर्थ में प्रयोग कर दिया जाता है किंतु विधिक दृष्टि से दोनों के अलग-अलग अर्थ हैं। प्रत्येक विधि (Law) में उसके क्रियान्वयन के लिए आवश्यक नियम (Rule) बनाने के प्रावधान निहित होते हैं। नियम निर्माण की शक्ति प्रत्येक देश की कार्यपालिका (Executive) शाखा में निहित होती है। नियम विधि से परे नहीं जा सकते और वे विधायिका के अनुमोदन (Legislative Ratification) के अधीन होते हैं। नियम अधीनस्थ विधायन (Subordinate Legislation) होते हैं। विनियम का निर्माण विनियामकीय प्राधिकार (Regulatory Authority) द्वारा जारी किया जाता है। ये विधि और नियम को विस्तार देते हैं। उन्हें प्रायोगिक परिस्थितियों के अनुकूल बनाते हैं। ये कार्य तकनीकी एवं प्रक्रियात्मक पहलू से अधिक जुड़े होते हैं।

प्रदत्त विधान (Delegated Legislation) : जब विधायिका किसी विधि का निर्माण करते समय नियम, विनियम तथा उपनियम बनाने के लिए कार्यपालिका को अधिकृत कर देती है और कार्यपालिका यह कार्य करती है तो कार्यपालिका के इस कार्य को प्रदत्त विधान के नाम से संबोधित किया जाता है।

प्रतिबद्धता (Commitment) : जनता के हितों की रक्षा हेतु प्रतिबद्धता। विभिन्न प्रकार के प्रलोभनों से बचना। निजी हितों एवं व्यक्तिगत कार्यों से ऊपर उठकर लोकसेवा के दायित्व को तरजीह देना। अपने कर्तव्य के प्रति समर्पण भाव। अपने संगठन तथा लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति समर्पित होना चाहिए। अपने वादों के प्रति प्रतिबद्ध होना चाहिए। सांगठनिक मूल्यों एवं लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति समर्पित होना चाहिए। अपने कार्यों एवं निर्णयों से इन्हें क्षति नहीं पहुंचनी चाहिए। अपने द्वारा किए गए वादों के प्रति प्रतिबद्ध होना चाहिए।

विवेकशीलता (Rationality): प्रत्येक घटना तथा विचार को तथ्य और परिस्थितियों के आधार पर स्वयं परखा जाना चाहिए एवं सुनी-सुनाई बातों पर कोई भी निर्णय नहीं लेना चाहिए। पूर्वाग्रह आधारित न होकर विवेकपूर्ण निर्णय होना चाहिए। दूसरों के विचारों को गंभीरतापूर्वक सुनना एवं कोई भी निर्णय लेने से पूर्व उन पर भी ध्यान देना आवश्यक है। अविश्वास एवं अतिविश्वास से बचते हुए तथ्यों, साक्ष्यों एवं तर्कों के आधार पर सही एवं गलत का निर्धारण होना चाहिए।

दबाव समूह (Pressure Groups): दबाव समूह ऐसे गैर-राजनीतिक संगठन हैं जो अपने सदस्यों के सामान्य हितों को साधने एवं उद्देश्यों को पूरा करने के लिए संगठित रूप से सरकार की नीतियों व निर्णयों को प्रभावित कर अपना काम करवाते हैं, जैसे- व्यापारिक समूह, मजदूर संघ, किसान संघ, धार्मिक समूह, छात्र संगठन, जाति समूह, भाषा समूह आदि।

हित समूह (Interest Groups): संगठित रूप से लोगों के ऐसे समूह या समुदाय जो कि साझा हितों की प्राप्ति या संवर्धन या रक्षा के लिए सदस्यों को एकजुट बनाए रखते हैं, वे हित समूह कहलाते हैं। सामान्यतया हित समूह तथा दबाव समूह को एक समान माना जाता है किंतु इनमें कुछ भेद है। प्रत्येक हित समूह, दबाव समूह नहीं होता है। हित समूह सरकार पर नीतिगत दबाव बनाए, यह आवश्यक नहीं है।

अंतर		
क्र.सं.	हित समूह	दबाव समूह
1.	औपचारिक रूप से संगठित	पूर्णतया तथा कठोरता से संरचित
2.	हितोन्मुखता	दबावोन्मुखता
3.	सरकार पर नीतिगत दबाव दें या ना दें	सरकार की नीतियों को अवश्य प्रभावित करते हैं।
4.	नरम दृष्टिकोण	कठोर दृष्टिकोण
5.	सामान्यतया सुरक्षात्मक	सुरक्षात्मक किंतु प्रोत्साहनकारी भी

Committee on Standards in Public Life (CSPL): यूनाइटेड किंगडम में 1994 में सार्वजनिक पद पर आसीन लोगों के नैतिक मानदंड के निर्धारण हेतु नोलन समिति द्वारा सुझाव दिये गये। इन सुझावों से यह पता चलता है कि एक लोक सेवक में किन-किन नैतिक गुणों की विद्यमानता का होना आवश्यक है। **सार्वजनिक जीवन के सात मूल तत्व या सात सिद्धान्त हैं-**

1. **निःस्वार्थनिष्ठता (Selflessness):** सार्वजनिक पद पर बैठे लोगों (लोकपदाधिकारी) को केवल सार्वजनिक हित (लोकहित) को ध्यान में रखते हुए निर्णय लेना चाहिए। अपने परिवार और अपने मित्रों के लिए वित्तीय या अन्य भौतिक लाभ प्राप्त करने के लिए निर्णय नहीं लेना चाहिए। (निर्णय लेने का आधार समुचित हो)
2. **सत्यनिष्ठता (Integrity):** सार्वजनिक पद धारण करने वाले लोगों को चाहिए कि वे अपने पदीय दायित्वों के निर्वहन में बाहरी लोगों या संगठनों के वित्तीय या अन्य कृतज्ञताओं के प्रभाव में नहीं आएं।
3. **वस्तुनिष्ठता (Objectivity):** सार्वजनिक कार्यों को संपादित करते समय जैसे- सार्वजनिक नियुक्तियाँ, संविदाएं या लोगों को पुरस्कारों और लाभों के लिए संस्तुति करते समय सार्वजनिक पदाधिकारी को योग्यता के आधार पर चयन करना चाहिए।
4. **जवाबदेहिता (Accountability):** सार्वजनिक पद पर आसीन पदाधिकारियों को अपने निर्णय और कार्यों के लिए जनता के प्रति जवाबदेह होना चाहिए और इस मामले में उपयुक्त जांच के लिए तैयार रहना चाहिए।
5. **खुलापन (Openness):** सरकारी पदाधिकारी को अपने सभी निर्णयों और कार्यवाहियों के संबंध में खुलापन होना चाहिए। उन्हें अपने निर्णयों के लिए कारणों का उल्लेख करना चाहिए और किसी सूचना को देने पर तभी रोक लगानी चाहिए जब व्यापक जन हित में ऐसा करना आवश्यक हो।
6. **ईमानदारी (Honesty):** सरकारी पदाधिकारी व्यक्तियों का यह कर्त्तव्य है कि वे अपने सार्वजनिक कर्तव्यों के संदर्भ में अपने निजी हितों की घोषणा करें। कर्तव्यों एवं निजी हितों के बीच विरोध की स्थिति में उसे समाधान के वे कदम उठाने चाहिए जिससे सार्वजनिक हितों की रक्षा हो सके।
7. **नेतृत्व (Leadership):** सरकारी पदाधिकारियों को उपरोक्त मूलभूत तत्वों को बढ़ावा एवं समर्थन करते हुए स्वयं को एक आदर्श उदाहरण के रूप में विकसित करने का प्रयास करना चाहिए।

नोलन समिति के उपरोक्त सुझावों से यह स्पष्ट है कि शासन में नैतिकता तभी आयेगी जब लोक सेवकों में उपरोक्त मूल्य व्यवहार के स्तर पर अभिव्यक्त हों, उनके क्रियाकलाप इन मूल्यों से संचालित हों। केवल नियमों और कानूनों के होने मात्र से लोक सेवा के आदर्श को प्राप्त नहीं किया जा सकता बल्कि ऐसे मूल्यों को धारण करना भी आवश्यक है ताकि निर्णय एवं कार्य करते वक्त अधिकारी नैतिकता का आदर्श उपस्थित कर सकें।

उत्तरदायित्व एवं जवाबदेयता में अंतर (Difference between Responsibility & Accountablity):

क्र.सं.	उत्तरदायित्व (Responsibility)	जवाबदेयता (Accountablity)
1.	नैतिकता एवं कर्त्तव्य बोध से संबंधित	कानूनी संकल्पना है, अतः इसमें कानूनी बाध्यता की स्थिति
2.	संबंध स्वचेतना या अंतःकरण से है।	जवाबदेयता एक बाहरी एवं वस्तुनिष्ठ स्थिति है जो संगठनात्मक नियमों पर निर्भर करती है।
3.	उल्लंघन की स्थिति में दंडात्मक विधान नहीं	उल्लंघन की स्थिति में अनुशासनात्मक कार्यवाही या दंडात्मक विधान
4.	इसका संबंध कर्त्तव्य पालन से है।	इसका संबंध अधिकार और कर्त्तव्य दोनों से है।
5.	यहाँ कर्त्तव्य पालन का आधार कानून न होकर नैतिक चेतना है।	अधिकार के संदर्भ में जवाबदेयता का अर्थ है कि जब व्यक्ति अपने अधिकारों का दुरूपयोग करे तो इसके लिए उसे जवाबदेह माना जाय।
6.	व्यक्ति उत्तरदायित्व का पालन दंड के भय से नहीं बल्कि अपनी आत्म-संतुष्टि के लिए अंतःकरण से करता है।	कर्त्तव्य के संदर्भ में इसका आशय है कि जब कोई व्यक्ति अपने कर्त्तव्य की अवहेलना करे तो इसके लिए उसे जवाबदेह माना जाय। चूंकि जवाबदेयता एक कानूनी संकल्पना है, अतः व्यक्ति को उसी सीमा तक जवाबदेह माना जायेगा जिस सीमा तक कानून में इसका प्रावधान हो।
7.	जैसे- कोड ऑफ इथिक्स (नैतिक संहिता) में उत्तरदायित्व का भाव है।	जैसे- कोड ऑफ कंडक्ट (आचरण संहिता) में जवाबदेयता का भाव है।

लोक निधि (Public Fund): लोक निधि से लोक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराया जाता है। लोक निधि का संबंध राष्ट्र निर्माण, सामाजिक-आर्थिक अवसंरचना के विकास, मानव संसाधन विकास, लोक-कल्याणकारी राज्य की संकल्पना एवं सुशासन आदि से है।

कारपोरेट शासन-व्यवस्था (Corporate Governance): कारपोरेट शासन-व्यवस्था बदलते सामाजिक-आर्थिक परिवेश में उभरी, एक आधुनिक एवं बहुआयामी संकल्पना है जिसमें कंपनी की कार्य प्रणाली, निर्णय प्रक्रिया, संचालन व्यवस्था, लक्ष्य एवं उद्देश्यों को इस प्रकार निर्देशित एवं नियंत्रित करने की बात होती है ताकि कंपनी की संवृद्धि के साथ-साथ पारदर्शिता, जबावदेयता, निष्पक्षता (Fairness), सामाजिक हित एवं पर्यावरणीय मूल्यों का रक्षण एवं परिमार्जन हो। शेयरधारकों एवं अन्य भागीदारों यथा उपभोक्ताओं, नागरिकों, कर्मचारियों आदि का भी हित सुरक्षित रहे तथा कंपनी के साथ-साथ उनकी भी दीर्घकालीन संवृद्धि हो। संक्षेप में कारपोरेट शासन व्यापार में नैतिक आचरण है।

कॉरपोरेट (निगमित) सामाजिक उत्तरदायित्व (Corporate Social Responsibility): इसका आशय है- निजी क्षेत्र अपने लाभ का एक अंश सामाजिक विकास में खर्च करे। कंपनी जो लाभ कमाती है वह केवल उसकी कुशलता एवं कार्य प्रणाली पर निर्भर नहीं है, बल्कि इसमें सरकार द्वारा विकसित की गई आधारभूत संरचना, मानव संसाधन के विकास के प्रयास में समाज और सरकार के सहयोग की भी भूमिका होती है। ऐसी स्थिति में कंपनियों का दायित्व है कि वे सामाजिक जिम्मेदारियां भी निभाएँ यथा पर्यावरण संरक्षण, मानवाधिकार रक्षा, उपभोक्ताओं एवं कर्मचारियों के हितों की भी रक्षा करें।

विधि (Law): विधि एक ऐसा माध्यम है जिसकी सहायता से राज्य जनता के आचरणों, संव्यवहारों तथा कार्यकलापों पर उचित नियंत्रण रखते हुए समाज में व्यवस्था बनाए रखता है। विधि मनुष्य के स्वच्छन्द जीवन को अनुशासित रखती है। विधि समाज का दर्पण है जिसमें स्थान विशेष की सामाजिक परिस्थितियों, लोक-परम्पराओं आदि का भी समुचित स्थान परिलक्षित होता है।

विधि और नैतिकता (Law and Ethics): दोनों हमारे व्यवहार को निर्देशित करते हैं-

क्र.सं.	विधि (Law)	नैतिकता (Ethics)
1.	व्यक्ति के बाह्य पक्ष से संबंधित	आंतरिक और बाह्य दोनों पक्षों से संबंधित
2.	उल्लंघन की स्थिति में दंड का विधान	उल्लंघन करने पर पश्चाताप एवं ग्लानि
3.	बाहर से आरोपित/वस्तुनिष्ठता	अंतरात्मा और जागरूकता से संबंधित/ आत्मनिष्ठता
4.	आदेश एवं बाध्यता का भाव	संकल्प की स्वतंत्रता/स्वेच्छता का भाव

कानून एवं नैतिकता के अंतर्विरोध : नैतिक कर्त्तव्य एवं कानूनी दायित्व हमेशा एकरूप नहीं होते। उदाहरणस्वरूप-

1. यह आवश्यक नहीं है कि जो नैतिक दृष्टिकोण से अनुचित है, वह कानूनी दृष्टिकोण से भी गलत हो जैसे- झूठ, ईर्ष्या, लोभ, द्वेष आदि नैतिक दृष्टिकोण से अनुचित है, परंतु यह कानूनी दृष्टिकोण से अपराध नहीं है। परन्तु अगर झूठ बोलकर किसी को ठगा जाता है तब वह नैतिक दृष्टिकोण से अनुचित एवं कानूनी दृष्टिकोण से अपराध हो जाता है।
2. पुनः जो गैर-कानूनी है वह नैतिक दृष्टिकोण से उचित हो सकता है। उदाहरणस्वरूप- गर्भपात गैर-कानूनी है, परंतु महिला के जीवन रक्षा हेतु यदि यह आवश्यक हो तो फिर उसे उचित माना जा सकता है।
3. कई बार कानून पुराने, अनुपयोगी एवं अप्रासंगिक हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में उन कानूनों के आधार पर नैतिकता का निर्धारण करना उचित नहीं माना जा सकता।
4. आपदा, सांप्रदायिक दंगें आदि के समय, जब तत्काल निर्णय लेने की आवश्यकता हो उस समय कानूनी प्रक्रियाओं का पालन न करते हुए भी आपदाग्रस्त इलाके में सहायता पहुंचाना और विपत्ति में पड़े लोगों के जान-माल की रक्षा करना, नैतिक दृष्टिकोण से उचित माना जाएगा।

कानून, नियम और विनियम में कानून की स्थिति सर्वोच्च होती है। कानून का ही व्याख्यान, विस्तारण एवं स्पष्टीकरण नियम और विनियम के माध्यम से किया जाता है, ताकि कानून को व्यावहारिक रूप दिया जा सके, उसकी मूल भावना को साकारित किया जा सके।

नियम (Rule): प्रत्येक कानून (Law) में उसके क्रियान्वयन के लिए आवश्यक नियम (Rule) बनाने के प्रावधान निहित होते हैं। ये नियम कानून की मूल भावना से संगति रखते हुए उनकी व्याख्या, स्पष्टीकरण एवं विस्तारण करते हैं, ताकि कानून को सरलतापूर्वक, प्रभावी रूप से लागू किया जा सके। नियम निर्माण की शक्ति प्रत्येक देश की कार्यपालिका (Executive) शाखा में निहित होती है। नियम विधि से परे नहीं जा सकते और वे विधायिका के अनुमोदन (Legislative Ratification) के अधीन होते हैं। विधायिका द्वारा कार्यपालिका को इस प्रकार के नियम बनाने की शक्ति प्रदान करने को अधीनस्थ विधायन (Subordinate Legislation) या प्रत्यायोजित विधायन (Delegated Legislation) कहते हैं।

विनियम (Regulations): विनियम का निर्माण विनियामकीय प्राधिकरण (Regulatory Authority) द्वारा किया जाता है। ये विधि और नियम को विस्तार देते हैं। उन्हें प्रायोगिक परिस्थितियों के अनुकूल बनाते हैं। ये कार्य के तकनीकी एवं प्रक्रियात्मक पहलू से अधिक जुड़े होते हैं।

सामाजिक नियम: समाज द्वारा मान्यता प्राप्त व्यवहार या आचरण के नियम ही सामाजिक नियम हैं।

हित-विरोधिता (Conflict of Interest): जब अपने हितों की रक्षा या पूर्ति को लेकर दूसरों के हितों के साथ संघर्ष की स्थिति हो तो फिर उसे हित-विरोधिता कहते हैं, जैसे- लोक सेवा में कई बार लोक सेवक के व्यक्तिगत हित एवं सार्वजनिक हित या पदीय कर्त्तव्य को लेकर संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती

है। ऐसी स्थिति में उसे व्यक्तिगत हित के स्थान पर सार्वजनिक हित या पदीय कर्त्तव्य को प्राथमिकता देनी चाहिए। व्यापार के संदर्भ में व्यवसायिक हित एवं सार्वजनिक हित को लेकर संघर्ष, प्राइवेट सेक्टर में व्यक्तिगत हित, सार्वजनिक हित एवं सांगठनिक हित को लेकर संघर्ष, कानूनी नैतिकता एवं सार्वजनिक नैतिकता को लेकर संघर्ष, विभिन्न देशों के मध्य अपने हितों की रक्षा के लिए संघर्ष आदि।

दक्षिण चीन सागर में विभिन्न देश अपने हितों को लेकर संभावित संघर्ष की ओर बढ़ रहे हैं। विभिन्न देशों के बीच हितों के संघर्ष को नेहरू के पंचशील के अनुपालन के माध्यम से समाधान किया जा सकता है। लोक सेवा में हितों के संघर्ष को सिविल सेवा के आधारभूत मूल्यों के अनुपालन जैसे- सत्यनिष्ठा, ईमानदारी, गैर-तरफदारी, वस्तुनिष्ठता, निष्पक्षता आदि के माध्यम से दूर किया जा सकता है।

नैतिक दुविधा (Ethical Dilemmas): निर्णय लेने या कार्य करते समय जब दो या दो से अधिक विकल्पों में से किसी एक विकल्प को चुनने में असमंजस या द्वन्द की स्थिति उत्पन्न हो और उससे नैतिक पक्ष संबंधित हो, तो फिर उसे नैतिक दुविधा कहते हैं। नैतिक दुविधा सामान्यत: व्यक्तिगत हित और सार्वजनिक हित, कानूनी नैतिकता और सार्वजनिक नैतिकता, तात्कालिक हित एवं दीर्घकालिक हित में से किसी एक के पक्ष में निर्णय लेने के क्रम में उत्पन्न होती है। उदाहरणस्वरूप, बुलेट ट्रेन के लिए हजारों मैंग्रोव वनों का काटा जाना। यह पर्यावरण संरक्षण बनाम आर्थिक समृद्धि के बीच संघर्ष का मामला है।

नैतिक दुविधाओं के निराकरण के क्रम में संवैधानिक मूल्यों, नियम और कानून, दिशा निर्देशों, अंतरात्मा, प्रगतिशील मानवीय मूल्यों, दीर्घकालिक मानवीय हितों एवं 'महाजनों येन गत: स पन्था' अर्थात् महापुरुषों के द्वारा प्रतिपादित मार्ग को ध्यान में रखकर निर्णय लिया जा सकता है।

अंतरात्मा/अंत:करण (Conscience): मानव स्वभाव की रचना अनेक तत्वों से हुई है, जैसे- आवेग या वासना, आत्मप्रेम, परोपकार आदि। इनमें सर्वोपरि तत्व अंत:करण है। यह मनुष्य का आंतरिक विवेक एवं नैतिक शक्ति है जो कर्मों के परिणाम पर विचार किये बिना ही उचित-अनुचित का साक्षात् ज्ञान प्रदान करती है। इसे मूलत: बौद्धिक माना जाता है। मानव स्वभाव में अंत:करण वह तत्व है जो मानव को उचित कर्म करने के लिए उत्प्रेरित करता है, मार्गदर्शित करता है तथा निर्णय भी करता है। इसी आंतरिक तत्व के आधार पर यह कहा जाता है कि मनुष्य अपना मानदण्ड स्वयं है। 'अंतरात्मा की आवाज' जैसे आह्वान उचित कर्म करने के लिए प्रेरित करते हैं। कांट ने अपने दर्शन में अंत:करण को व्यावहारिक बुद्धि के रूप में स्वीकार किया है। वे इसे नैतिक बुद्धि मानते हैं जो नैतिक नियम को ग्रहण करती है। कांट का यह मानना है कि अंत:करण कभी गलत नहीं हो सकती है। अशुद्ध अंत:करण एक कल्पना मात्र है।

प्रशासन में अंतरात्मा का उपयोग (Use of conscience in Administration):

1. जब स्पष्ट नियम, कानून या दिशा-निर्देश न हो और निर्णय लेना आवश्यक हो, तो फिर वैसे स्थिति में अंतर्रात्मा का उपयोग किया जा सकता है।
2. आपदा, साम्प्रदायिक दंगे आदि की स्थिति में भी जब तत्काल निर्णय लेकर लोगों के जान-माल की रक्षा करना तथा शांति और व्यवस्था बनाये रखना आवश्यक हो, तो वैसी स्थिति में भी कानूनी प्रक्रिया की बजाय अपनी अंतर्रात्मा के अनुसार प्रशासक कार्य कर सकता है। उल्लेखनीय है कि उपरोक्त स्थिति में प्रक्रिया की बजाय परिणाम अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है।
3. विवेकाधीन अधिकारों का उपयोग करते समय भी प्रशासकों को अंतरात्मा को ध्यान में रखना चाहिए।
4. प्रगतिशील मानवीय मूल्यों की रक्षा करने के क्रम में भी नियम और प्रक्रिया का एक सीमा तक उल्लंघन करते हुए अपनी अंतर्रात्मा के अनुसार निर्णय लिया जा सकता है।
5. जब पर्याप्त आंकड़े और साक्ष्य उपलब्ध नहीं हो तो वैसी स्थिति में भी अंतरात्मा की आवाज पर ध्यान देते हुए कार्य किया जा सकता है।
6. नैतिक दुविधा या द्वन्द्व की स्थिति उत्पन्न होने पर भी इसके निराकरण के क्रम में अंतरात्मा के अनुसार कार्य किया जा सकता है।

कानून एवं अंतरात्मा में अंतर	
• कानून में वाह्य दबाव की स्थिति होती है।	• अंतरात्मा में आंतरिक दबाव की स्थिति होती है।
• इसमें दंड के भय एवं पुरस्कार के लोभ के माध्यम से कानून का अनुपालन सुनिश्चित किया जाता है।	• अंतरात्मा के उल्लघंन की स्थिति में अपराध बोध, पश्चाताप या आत्म ग्लानि का भाव उत्पन्न होता है।

ई-गवर्नेन्स (E-Governance): शासन के क्रियाकलापों, पद्धतियों एवं प्रक्रियाओं में सूचना एवं संचार पद्धति का अनुप्रयोग ही ई-शासन है। इसका मुख्य उद्देश्य शासन को सरल, कुशल, त्वरित, प्रभावी, पारदर्शी एवं उत्तरदायी बनाकर उसे नागरिक केन्द्रित बनाना, नागरिकों को सूचना प्रदान करके उनका सशक्तीकरण करना तथा शासन और नागरिकों के बीच की दूरी को कम करना है। इससे सेवाओं को त्वरित एवं समय पर उपलब्ध कराने में सहायता मिलती है, जैसे- भूमि पंजीकरण, रेलवे, टेलीफोन, मोटरवाहन विभाग जैसे सेवा क्षेत्रों में ई-गवर्नेंस की स्थिति। इसके द्वारा शासन को स्मार्ट (SMART) शासन बनाया जा सकता है।

यहाँ SMART का आशय है-

S – Simple/Small (सरल/छोटा)
M – Moral (नैतिक)
A – Accountable (जवाबदेह)
R – Responsible/Responsive (उत्तरदायित्वपूर्ण/अनुक्रियाशील)
T – Transparent (पारदर्शी)

सुशासन में भी SMART गवर्नेंस की अवधारणा रहती है। ई-गवर्नेंस में सूचना तकनीक का उपयोग करके नागरिकों से संपर्क स्थापित किया जाता है तथा शासन के विभिन्न विभागों में उपलब्ध कार्यक्रमों एवं नीतियों की ऑनलाइन जानकारी दी जाती है। नागरिक अपनी शिकायतों, सुझावों एवं आवेदन पत्रों आदि को ऑनलाइन रूप में भेज सकते हैं। इससे निर्णय प्रक्रिया में जनता की भागीदारी बढ़ती है और पारदर्शिता को बढ़ावा मिलता है। इससे सूचना एवं सेवा आपूर्ति में सुधार, प्रशासन की सक्षमता में सुध ार एवं जवाबदेयता तय करने में आसानी होगी। भारत में ग्रामीण ई-प्रशासन परियोजनाएं जैसे- ई-चौपाल, आकाशगंगा, ज्ञानदूत, लोकमित्र आदि हैं। ई-गवर्नेंस प्रशासन को मितव्ययी बनाता है।

ई-सरकार (E-Government): ई-सरकार का आशय है-इलेक्ट्रॉनिक सरकार या डिजिटल सरकार। इसका तात्पर्य ऐसी सरकार से है, जो नवीनतम सूचना तकनीकी साधनों का प्रयोग करके अपने ग्राहकों अर्थात् जनता को सेवाएं, सुविधायें एवं सूचनाएं प्रदान करती है। इससे पारदर्शिता बढ़ती है और नागरिक सशक्तिकरण होता है।

नागरिक अधिकार घोषणा पत्र (Citizen Charter): जब सरकार या सेवा प्रदाता संगठन अपने कार्यों एवं सेवाओं की सूचना सार्वजनिक रूप से उपभोक्ताओं एवं नागरिकों को उपलब्ध कराता है तथा इस संबंध में एक निश्चित अवधि एवं शिकायत निवारण तंत्र का भी उल्लेख होता है तो फिर उसे सिटीजन चार्टर या नागरिक अधिकार घोषणा-पत्र कहा जाता है। यह संगठन/शासन को पारदर्शी, जिम्मेदार एवं नागरिक-मित्र/ नागरिक अनुकूल बनाने में सहायक है। यह गुणवत्तापूर्ण सेवा प्रभावी एवं निष्पक्ष रूप से प्रदान करने में सहायक है। यह प्रशासन का लोक उत्तरदायित्व सुनिश्चित करने का एक साधन है। यह लोक सेवा को लोगों की आवश्यकताओं के अनुसार बनाने तथा लोकसेवाओं का मूल्यांकन नागरिकों के दृष्टिकोण से करने पर बल देता है। यह प्रशासन पर एक नैतिक जवाबदेयता निर्धारित करता है। यह भ्रष्टाचार को दूर कर सुशासन की स्थापना में मदद करता है। इससे प्रशासन की कार्यकुशलता एवं निष्पक्षता के प्रति लोगों का विश्वास बढ़ता है। यह सरकारी कर्मचारी के दृष्टिकोण में परिवर्तन लाने एवं उन्हें लक्ष्य केन्द्रित कार्य करने के लिए निर्देशित करता है। यह प्रशासन व नागरिकों के बीच सेतु का निर्माण कर प्रशासन

को नागरिकों की जरूरतों एवं अपेक्षाओं को पूरा करने हेतु सरल एवं कारगर तरीका बताता है। संक्षेप में, नागरिक-प्रशासन संबंध को सकारात्मक तरीके से प्रभावित करने का एक महत्वपूर्ण उपकरण सिटीजन चार्टर है। द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (2nd ARC) ने सेवोत्तम मॉडल को अपनाने की सिफारिश की है।

नागरिक समाज (Civil Society): नागरिक समाज से अभिप्राय गैर सरकारी संस्थाओं यथा सहकारी, व्यावसायिक, कृषक एवं कर्मचारी संगठनों तथा उन व्यवस्थित संस्थाओं से है जो राज्य तथा समाज एवं परिवार के बीच कड़ी का काम करते हुए आम लोगों की भलाई के लिए कार्यरत होते हैं। नागरिक समाज एक गैर-राज्य एवं गैर-सरकारी संस्था है। यह एक छातानुमा अवधारणा है, जिसके अंतर्गत अनेक संस्थाएं एवं संगठन आते हैं यथा, गैर-सरकारी संगठन, स्वयंसेवी संस्थाएं, कृषक संघ, दबाव समूह, व्यावसायिक समूह, हित समूह, महिला समूह, युवक समूह, सामुदायिक समूह, मीडिया इत्यादि। एक प्रजातांत्रिक व्यवस्था में इन संगठनों एवं संस्थाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है। नागरिक समाज सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए गरीबों, दलितों एवं उपेक्षितों को संगठित एवं एकजुट कर उनका सशक्तीकरण करता है। उनके कल्याण के लिए योजनाओं के निर्माण में सहयोग करता है। यह सरकार के द्वारा विकास एवं कल्याण के लिए शुरू किए गए कार्यक्रमों एवं योजनाओं की जानकारी आम आदमी को देता है। एक स्वस्थ लोकतंत्र के लिए सशक्त नागरिक समाज का होना आवश्यक है।

नागरिक समाज कई बार विधायिका पर पर्यावरण, भ्रष्टाचार, भूख, गरीबी आदि सम्मिलित विषयों पर कानून बनाने हेतु दबाव डालता है और उससे संबंधित सुझाव भी प्रस्तुत करता है, उदाहरणस्वरूप भारत में सूचना का अधिकार अधिनियम (2005), शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009, भोजन का अधिकार (राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा) अधिनियम, 2013 आदि नागरिक समाज के सकारात्मक प्रभाव को दर्शाते हैं।

सामाजिक अंकेक्षण (Social Auditing) : सामान्य अर्थों में सामाजिक अंकेक्षण सरकारी कार्यों का जनता द्वारा निरीक्षण, निगरानी, समीक्षा एवं मूल्यांकन को बताता है। यह मुख्यत: सामाजिक विकास कार्यक्रमों के समाज पर पड़े प्रभाव, उसकी गुणवत्ता तथा संबंधित लोगों की जवाबदेहिता को दर्शाता है। सामाजिक अंकेक्षण में ग्राम सभा, स्वयंसेवी संस्थाओं, जनभागीदारी आदि की भूमिका होती है। यह स्थानीय प्रशासन में पारदर्शिता एवं उत्तरदायित्व को बढ़ावा देता है। यह प्रशासन की कार्यकुशलता में सुधार लाता है और सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन में नागरिकों की भागीदारी तथा सामूहिक निर्णयन को बढ़ावा देता है। यह प्रशासन की अच्छाइयों के साथ-साथ वित्तीय अकुशलता तथा भ्रष्ट कार्यों की जानकारी जनसामान्य को प्रदान करता है।

परम्परागत रूप से सामाजिक अंकेक्षण किसी उद्योग या कंपनी के सामाजिक दायित्वों, उपक्रम के उत्पादन से समाज पर पड़े प्रभाव तथा उद्यम की सामाजिक जवाबदेयता का प्रतीक है। कल्याणकारी राज्य एवं विकास प्रशासन के संदर्भ में यह विकास कार्यों विशेषत: सामाजिक विकास कार्यक्रमों से समाज पर पड़े प्रभाव या उन कार्यक्रमों की प्रभावशीलता का परिचायक है।

लोक भागीदारी (Public Participation): सरकार या अन्य किसी सांगठनिक कार्य में या सामान्य हित में सामान्य जनता द्वारा अपनी भूमिका का निर्वहन करना ही लोक भागीदारी है। यह ग्राम स्तर से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक हो सकती है। लोक भागीदारी नागरिकों के द्वारा प्रशासनिक कार्यों में ऐसा हस्तक्षेप है जो विधिसम्मत एवं प्रजातांत्रिक है। लोक भागीदारी स्वत: स्फूर्त या स्वत: गतिमान होती है। लोक भागीदारी से विकास कार्यक्रम में दक्षता एवं प्रभावशीलता आती है, जनता का सशक्तीकरण होता है, इससे सरकारी कार्यों का जन अनुवीक्षण (Public Scrutiny) हो जाता है। लोक भागीदारी से शासन में पारदर्शिता बढ़ेगी, शासन में संवेदनशीलता में वृद्धि होगी, समस्याओं का स्थानीय हल होगा, दक्षता और प्रभावशीलता बढ़ेगी, जनता का सशक्तीकरण होगा, व्यक्ति तथा समूह में सामूहिक सृजनात्मकता का भाव उत्पन्न होगा, इससे लोकतंत्र मजबूत होगा और अंतत: सुशासन की स्थापना होगी। इस प्रकार लोक भागीदारी सुशासन एवं प्रजातंत्र के बीच कड़ी का काम करती है।

लोकसेवा गारण्टी अधिनियम (Public Service Guaranty Act) : नागरिकों को दी जाने वाली सरकारी सेवाओं को जवाबदेयता से जोड़ने और दोषी कार्मिक को आर्थिक रूप से दण्डित करने के लिए लोक सेवा गारंटी कानून बनाया गया है। यह नागरिकों को एक निश्चित समय सीमा के भीतर विभिन्न नागरिक सेवाएं प्रदान करने की गारण्टी देता है और इसे उनका विधिक अधिकार बनाता है। इससे प्रशासन में भ्रष्टाचार पर अंकुश लगेगा, पारदर्शिता एवं जवाबदेयता को बढ़ावा मिलेगा, निर्धारित समय सीमा में नागरिक सेवाएं उपलब्ध होगीं तथा नागरिकों का सशक्तिकरण होगा। इसमें सेवाओं की आपूर्ति में विलम्ब की स्थिति में नागरिकों को क्षतिपूर्ति देने का प्रावधान है। ***इस अधिनियम का उद्देश्य है- संवेदनशील, उत्तरदायी, जवाबदेह, पारदर्शी एवं भ्रष्टाचार मुक्त शासन उपलब्ध कराना।*** सन् 2010 में प्रथमत: मध्य प्रदेश ने ऐसा कानून बनाया। कालांतर में उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब, दिल्ली, राजस्थान आदि राज्यों ने भी इससे संबंधित कानून बनाये हैं।

राजस्थान ने 1 अगस्त, 2012 में **जन सुनवाई कानून** भी लागू कर दिया है ताकि केन्द्र एवं राज्य की कल्याणकारी एवं विकास योजनाओं तथा कार्यक्रमों से सम्बद्ध नागरिकों की शिकायतों का समयबद्ध निपटारा हो सके।

पर्यावरणीय नैतिकता (Environmental Ethics): इसमें मानव के पर्यावरणीय उत्तरदायित्व के नैतिक आधारों का स्पष्टीकरण होता है। इसमें मानव के कर्मों एवं पर्यावरण के मध्य संबंध का नैतिक सिद्धांतों एवं मानकों के आधार पर मूल्यांकन किया जाता है अर्थात् उचित-अनुचित के रूप में निर्धारण किया जाता है। यहाँ पर्यावरण क्षरण एवं पर्यावरणीय असंतुलन के लिए जिम्मेदार कारकों जैसे- प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन (वनों की अंधाधुंध कटाई आदि), जीवाश्म ईंधनों का दहन आदि पर लगाम लगाते हुए जैव विविधता एवं पारिस्थितिकी तंत्र की रक्षा के साथ-साथ हरित ऊर्जा (Green Energy) स्रोतों की बात की जाती है। यहाँ पर्यावरणीय नैतिकता में प्रकृति को मनुष्य से अधिक महत्व दिया जाता है। पर्यावरणीय नीतिशास्त्र मानव में पर्यावरणीय मूल्यों यथा प्रकृति प्रेम, प्रकृति सुरक्षा आदि को बढ़ाने एवं उनके प्रति जागरूकता लाने में सहायक है।

लोक नीति (Public Policy): लोक नीति का निर्माण, क्रियान्वयन, मूल्यांकन एवं संशोधन करना लोक प्रशासन का महत्वपूर्ण कार्य है। लोक नीति अथवा 'सार्वजनिक नीति' (Public policy) वह नीति है जिसके अनुसार राज्य के प्रशासनिक कार्यपालक अपना कार्य करते हैं।

कार्य संस्कृति (Work Culture): किसी कार्यालय या संगठन में कार्य करने के तरीके, कर्मचारियों के आचरण या परस्पर व्यवहार, उनके अंतर्वैयक्तिक संबंध (Interpersonal relation), नियम, वातावरण, लक्ष्यों, मूल्यों, विश्वासों एवं अपेक्षाओं के समुच्चय को कार्य संस्कृति कहते हैं। किसी संगठन की कार्य संस्कृति उसके कर्मचारियों को यह बताती है कि उन्हें क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए? एक सकारात्मक कार्य संस्कृति शासन एवं प्रशासन में नैतिक मूल्यों को बढ़ावा देने में सहायक है। उदाहरणस्वरूप ISRO, गूगल आदि संगठनों की कार्य संस्कृति सकारात्मक है।

सामाजिक न्याय (Social Justice): प्रत्येक मानव को उत्पीड़न, शोषण और यातनाओं से मुक्त एक सम्मानजनक, प्रतिष्ठापूर्ण एवं शांतिपूर्ण जीवन यापन का अधिकार है। सामाजिक न्याय की अवधारणा इसमें सहायक है। सामाजिक न्याय का तात्पर्य सामाजिक जीवन की उस स्थिति से है जिसमें प्रत्येक को उसका उचित **'हक एवं स्थान'** प्राप्त होता है। सामाजिक न्याय का मूलमंत्र यह है कि संगठित सामाजिक जीवन से प्राप्त लाभ कुछ गिने-चुने लोगों के हाथों में सिमटकर न रहे बल्कि सर्वसाधारण को विशेषकर निर्बल, निर्धन, वंचित एवं उपेक्षित वर्गों को उसमें समुचित हिस्सा मिले ताकि वे सुखी एवं सम्मानपूर्ण जीवन व्यतीत कर सकें। इसमें समाज के सभी लोगों व वर्गों विशेषकर कमजोर वर्गों को भय तथा अभाव से मुक्ति दिलाना तथा उनमें समानता, स्वतंत्रता, भ्रातृत्व एवं मानवीय गौरव तथा गरिमा की भावना को विकसित करना है ताकि वे समाज की मुख्य धारा में सम्मिलित हो सके। इस प्रकार सामाजिक न्याय का विचार न्याय के सामान्य विचार को एक ऐसे नए धरातल पर ले जाता है जहाँ न्याय न्यायालयों का कार्यक्षेत्र न रहकर सरकार की सकारात्मक नीतियों और कार्यकमों का वृहत् कार्यक्षेत्र बन जाता है। इस रूप में यह

अवधारणा 'समानता' के विचार से आगे जाते हुए समाज में समतामूलक संरचना का सूत्रपात करता है।

समावेशी विकास (Inclusive Growth): समावेशी विकास का सामान्य अर्थ है- "आधारभूत विकास, सहभागी विकास तथा गरीब समर्थक विकास।" इसमें उपेक्षित, पीड़ित, शोषित एवं अधीनस्थों का विकास प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी, उनके जीवन स्तर में सुधार तथा उन्हें विशेष लाभ प्रदान करने का भाव निहित है ताकि वे सम्मानपूर्ण जीवन व्यतीत कर सकें। समावेशी विकास का लक्ष्य सामाजिक न्याय की प्राप्ति करना है। समावेशी विकास यदि प्रक्रिया है तो सामाजिक न्याय उसका प्रतिफल है। समावेशी विकास यदि शोषण विहीनता की स्थिति को प्राप्त करने का प्रयास है तो शोषण विहीनता की स्थिति सामाजिक न्याय है। समावेशी विकास यदि शोषितों, वंचितों एवं पिछड़ों को आत्मनिर्भर, शिक्षित एवं जागरूक बनाने का प्रयास है, तो उन्हें आत्मनिर्भर एवं शिक्षित कर समाज की मुख्य धारा में लाना ही सामाजिक न्याय है।

भ्रष्टाचार (Corruption): शासकीय रूप से भ्रष्टाचार को इस प्रकार परिभाषित किया गया है कि जब लोकपद, लोकपद से जुड़ी प्रतिष्ठा या शक्तियों का दुरुपयोग अपने निजी हित या किसी को गलत लाभ देने के संदर्भ में किया जाता है, तो इसे भ्रष्टाचार के रूप में लेते हैं। भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 की धारा 7 में कहा गया है कि जब कोई भी, जो लोकसेवक है या लोकसेवक बनने वाला है और वह कानूनी रूप से दिए जा रहे भुगतानों के अतिरिक्त अन्य भुगतान स्वीकार करता है, या स्वीकार करने के प्रयास करता है, चाहे वह स्वयं के संदर्भ में हो या किसी अन्य व्यक्ति के संदर्भ में हो, ताकि वह अपने कार्यालयी कार्यों में या तो पक्षपात कर सके या फिर किसी के हितों के विरुद्ध कार्य कर सके या कोई सेवा दे सके, या देने से इंकार करे, तो इसे भ्रष्टाचार के रूप में लिया गया है।

एकाधिकार + विवेकाधीन अधिकार – जवाबदेयता = भ्रष्टाचार

जब विवेकाधीन शक्तियों का जवाबदेयता के बिना एकाधिकारवादी प्रवृत्ति के साथ दुरूपयोग किया जाता है तो निःसंदेह इससे भ्रष्टाचार का जन्म होता है।

व्हिसिल ब्लोअर (Whistle blower) : व्हिसिल ब्लोअर वह व्यक्ति या प्रतिनिधि/एजेंट है जो किसी संस्था के दोष, कमियों या दुराचरण/कदाचार को प्रकट करता है। व्हिसिल ब्लोअर विभाग की कमियों को सामने लाकर सुधार के अवसर उत्पन्न करता है। इस प्रकार यह शासन की गुणवत्ता में वृद्धि करने और उसे जबावदेह बनाने का प्रभावी साधन है।

लाल फीताशाही (Red Tapism): भारतीय प्रशासन की एक प्रमुख विशेषता लाल फीताशाही है। अधिकारी और कर्मचारी नियमों एवं विनियमों पर आवश्यकता से अधिक बल देते हैं। प्रत्येक काम सुनिश्चित प्रक्रिया द्वारा ही संपन्न करते हैं। अतः लाल कपड़ों में बंद फाइलें इधर से उधर घूमती रहती हैं। इससे निर्णय और कार्य में अनावश्यक विलंब होता है। इससे भ्रष्टाचार को बढ़ावा मिलता है। सिटिजन चॉर्टर, लोक सेवा गारण्टी अधिनियम आदि के माध्यम से इस पर नियंत्रण करने का प्रयास किया गया है।

प्रशासनिक सुधार (Administrative Reforms): प्रशासनिक सुधारों का अर्थ उस प्रक्रिया से है जिसमें प्रशासनिक व्यवस्था की कार्यकुशलता एवं गुणवत्ता में वृद्धि के लिए कृत्रिम (सुनियोजित) ढंग से अर्थात् जानबूझकर परिवर्तन किए जाते हैं। प्रशासनिक विकास या सुधार के निम्नलिखित उद्देश्य होते हैं-

1. प्रशासन की कार्यकुशलता एवं गुणवत्ता में वृद्धि करना।
2. प्रशासन में संरचनात्मक, प्रक्रियात्मक एवं व्यवहारात्मक सुधार करना।
3. प्रशासन को आधुनिक तकनीकों एवं विकास से दुरुस्त करना।
4. प्रशासन के कौशल में वृद्धि करना।
5. बदलती हुई सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक परिस्थितियों के अनुरूप प्रशासन में सुधार लाना।

द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (Second Administrative Reforms Commission): प्रशासन में व्यापक सुधार हेतु सुझाव देने, उसे कुशल, प्रभावी एवं जबाबदेह प्रशासनिक व्यवस्था बनाने के उद्देश्य से केन्द्र सरकार द्वारा 31 अगस्त, 2005 में कर्नाटक के पूर्व मुख्यमंत्री वीरप्पा मोइली की अध्यक्षता में 'द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग' का गठन किया गया था। इस आयोग को भारत सरकार के संगठनात्मक ढाँचे, लोक व्यवस्था में न्याय, शासन में नैतिकता, कार्मिक प्रशासन में सुधार, वित्तीय प्रबंधन के सुदृढ़ीकरण, राज्य एवं जिला स्तरीय प्रशासन के प्रभावी कार्य निष्पादन, स्थानीय स्वशासन एवं पंचायती राज के

सशक्तिकरण, सामाजिक-पूँजी, विश्वास तथा सहभागी लोक सेवा निष्पादन, नागरिक-केन्द्रित प्रशासन, ई-शासन प्रोत्साहन, संकट प्रबंधन तथा लोक व्यवस्था संबंधी प्रशासनिक मुद्दों का अध्ययन करने तथा तत्संबंधी सुधार हेतु सुझाव देने का दायित्व भारत सरकार ने सौंपा था। इस आयोग ने भारत सरकार को 15 प्रतिवेदन सौंपे थे-

क्र.सं.	प्रतिवेदन का नाम	क्र.सं.	प्रतिवेदन का नाम
1.	*सूचना का अधिकार : उत्तम शासन के लिए मास्टर कुँजी*	9.	*सामाजिक पूँजी : एक साझा नियति*
2.	मानव सम्पदा का व्यापक विस्तार : हकदारियाँ और अधिशासन— एक मामला अध्ययन (Case Study)	10.	कार्मिक प्रशासन की स्वच्छता : नयी ऊँचाइयों की प्राप्ति
3.	संकट प्रबंधन : निराशा से आशा की ओर	11.	*ई. गवर्नेंस को प्रोत्साहन : भविष्य की स्मार्ट राह*
4.	*शासन में नैतिकता*	12.	*नागरिक-केन्द्रित प्रशासन : अधिशासन का हृदय*
5.	लोक व्यवस्था : प्रत्येक के लिए न्याय ... सभी के लिए शांति	13.	भारत सरकार की संगठनात्मक संरचना
6.	स्थानीय अधिशासन: भविष्य की ओर प्रेरणाबद्ध यात्रा	14.	वित्तीय प्रबन्धन व्यवस्थाओं का सुदृढ़ीकरण
7.	संघर्ष समाधान हेतु क्षमता निर्माण : वैमनस्य से संयोजन	15.	राज्य एवं जिला प्रशासन
8.	आतंकवाद से लड़ाई : न्यायसंगत ढंग से बचाव		

आयोग की प्रमुख अनुशंसाएँ निम्नलिखित हैं—

1. भारत सरकार को लोक प्रशासन/प्रबंधन के स्नातक डिग्री पाठ्यक्रमों के संचालन हेतु राष्ट्रीय प्रशासन संस्थान की स्थापना करनी चाहिए।
2. प्रत्येक सरकारी सेवक को प्रारंभिक स्तर पर अनिवार्य और उसकी सेवावधि के दौरान समय-समय पर प्रशिक्षण देना चाहिए।
3. सरकारी सेवक की उसके पूरे कार्यकाल में दो बार (14 एवं 20 वर्ष बाद) गहन समीक्षा की जानी चाहिए।
4. एक नया सिविल सेवा विधेयक लाना चाहिए जिसमें केन्द्रीय सिविल सेवा प्राधिकरण का गठन किया जाना चाहिए।
5. गैर लाभ वाले कार्यकलापों में लगे बाह्य संगठनों में सरकारी सेवकों को प्रतिनियुक्ति पर जाने की छूट देनी चाहिए।
6. सिविल सेवकों को संवैधानिक संरक्षण देने वाले अनुच्छेद 310 एवं 311 समाप्त कर देना चाहिए।
7. जन अभियोग निराकरण हेतु एक राष्ट्रीय लोकायुक्त नामक संस्था को संवैधानिक दर्जा देना चाहिए। प्रधानमंत्री का पद उसके कार्यक्षेत्र से बाहर हो। संवैधानिक रूप से राज्य स्तर पर लोकायुक्त की स्थापना अनिवार्य की जानी चाहिए।
8. सरकारी कार्यक्रमों की योजना बनाने, क्रियान्वित करने तथा उनकी मॉनिटरिंग करने की प्रकिया में नागरिकों की सहभागिता सुनिश्चित की जाए।
9. नागरिकों से सरकारी सेवाओं के संदर्भ में नियमित रूप से फीडबैक एवं सर्वेक्षण की व्यवस्था सुनिश्चित की जाए।
10. सभी कार्यक्रमों में अनिवार्य रूप से 'सामाजिक अंकेक्षण' को लागू किया जाए।
11. लोकपाल को संवैधानिक मान्यता दी जाए और इसका नाम 'राष्ट्रीय लोकायुक्त' रखा जाए। इसका अध्यक्ष सर्वोच्च न्यायालय के सेवानिवृत न्यायाधीश को बनाया गया।

12. सांसद विकास निधि (MPLADS) तथा विधानसभा सदस्य विकास निधि (MLALADS) को समाप्त किया जाए।
13. केन्द्र-राज्य जल-विवाद को दूर करने के लिए उपयुक्त कदम उठाए जाएँ। रिवर-बेसिन ऑर्गेनाइजेशन (RBO) का गठन प्रत्येक अन्तर्राज्यीय नदी के लिए किया जाए।
14. राजनीतिक दलों के लिए आचार संहिता का निर्माण किया जाए।

आधारभूत संरचना/बुनियादी ढाँचा (Basic Structure): संविधान के बुनियादी ढांचे का आशय संविधान के मूल तत्व से है जो संविधान का सार तत्व या आत्मा है और जिन्हें संशोधन करने से संविधान का वास्तविक उद्देश्य बाधित होता है। मूल ढांचे में परिवर्तन संविधान को बदलने जैसा होगा। न्यायालय द्वारा इसे स्पष्ट रूप प्रदान नहीं किया गया है फिर भी सर्वोच्च न्यायालय ने प्रस्तावना में उल्लिखित दर्शनों को ही संविधान का 'आधारभूत अभिलक्षण' (जैसे– प्रभुत्व संपन्नता, समाजवाद, गणतंत्र, समानता, स्वतंत्रता, न्याय, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता आदि) माना है। यह निर्णय 'केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य' वाद में किया गया।

यद्यपि संसद को संविधान के भाग 3 में दिए गए मूल अधिकारों को संशोधित करने का अधि कार है, किन्तु संसद की यह शक्ति असीमित नहीं है, इस पर कुछ अन्तर्निहित प्रतिबंध अथवा सीमाएं है। संसद मूल अधिकारों में इस प्रकार का कोई संशोधन नहीं कर सकती जिससे संविधान के मूल ढांचे या मूल संरचना को क्षति पहुंचती हो। किसी भी संवैधानिक संशोधन को न्यायालय में इस आधार पर चुनौती दी जा सकती है कि संविधान के मूल ढांचे को क्षति पहुंचती है। यदि कोई संशोधन या कानून संविधान के आधारभूत ढांचे को क्षति पहुंचाती हो तो फिर न्यायापालिका उसे असंवैधानिक घोषित कर सकती है।

संपूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न गणराज्य (Sovereign Republic): भारत अपने आंतरिक एवं बाह्य मामलों में स्वतंत्र है। भारत अपने क्षेत्र के अंतर्गत सर्वोच्च सत्ता है तथा उसे किसी भी विषय पर कानून बनाने की शक्ति प्राप्त है। अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भी भारतीय राज्य स्वतंत्र है। अन्य राष्ट्रों से संबंध स्थापित करने, किसी संधि या समझौते को स्वीकारने अथवा राष्ट्रमण्डल जैसे किसी अंतर्राष्ट्रीय संगठन की सदस्यता ग्रहण करने में भारतीय राज्य स्वेच्छा से निर्णय लेता है, बाध्यता से नहीं।

गणराज्य की संकल्पना उस राज्य का प्रतीक है जिसमें राज्य का अध्यक्ष वंशानुगत या मनोनीत न होकर एक निश्चित अवधि के लिए निर्वाचित होता है। संविधान लागू होने से पूर्व भारत ब्रिटिश महारानी के सर्वोच्च आधिपत्य को स्वीकार करता था, जो वंशानुगत शासक के रूप में राजतंत्र की प्रतीक थी। किंतु 15 अगस्त, 1947 ई. को 'भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम' के लागू होने के साथ ही यह अधिराजत्व समाप्त हो गया तथा 26 जनवरी, 1950 ई. को नया संविधान लागू होने के साथ ही भारत गणराज्य बन गया। संविधान के अनुसार भारत में राज्य का अध्यक्ष राष्ट्रपति है, जो एक बार में 5 वर्ष की अवधि के लिए निर्वाचित होता है।

संपूर्ण प्रभुत्वसंपन्न	गणराज्य
अपने आंतरिक व बाह्य विषयों पर निर्णय लेने में पूर्ण स्वतंत्र है।	राष्ट्र का प्रमुख निर्वाचित है, वंशानुगत नहीं
राष्ट्रमंडल की सदस्यता स्वैच्छिक व अपनी शर्तों पर है।	कोई विशिष्ट नहीं
अंतर्राष्ट्रीय संधि व समझौतों को स्वेच्छा से ग्रहण करना। (बाध्यता नहीं)	जनता सभी पद धारण कर सकती है।
	अंतिम शक्ति गण (जनता) में ही निहित है।

उल्लेखनीय है कि गणराज्य बन जाने के बाद भी भारत 'राष्ट्रमण्डल (Commonwealth Nation)' का सदस्य बना रहा है, किंतु इससे भारतीय राज्य का गणतंत्रीय स्वरूप प्रभावित नहीं होता। भारत ने यह सदस्यता 'अधीन डोमिनियन' के रूप में नहीं, वरन् 'स्वतंत्र गणराज्य' के रूप मे स्वैच्छिक रूप से ग्रहण की है। इस तथ्य को स्पष्ट रूप से रेखांकित करने के लिए ही संविधान की प्रस्तावना में भारतीय गणराज्य को 'संपूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न' भी घोषित किया गया है।

पंथनिरपेक्षता (Secularism): पंथनिरपेक्षता शब्द को 1976 ई. में 42वें संशोधन द्वारा भारतीय संविधान की प्रस्तावना में जोड़ा गया। यद्यपि कि पंथनिरपेक्षता की मूल भावना संविधान में पहले से ही विद्यमान थी। इसके अनुसार राज्य सभी धर्मों को समान संरक्षण एवं सम्मान देगा। भारत का कोई 'राष्ट्रीय धर्म' नहीं होगा। भारत राज्य कोई धर्मतंत्रवादी या मजहबी (Theocratic) राज्य नहीं है। किंतु इसका अर्थ यह भी नहीं है कि राज्य धर्मविहीन, धर्मविरोधी या अधार्मिक है। भारतीय संविधान के अंतर्गत नागरिकों के लिए 'धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार' एक मूल अधिकार के रूप में प्रत्याभूत किया गया है तथा धर्म के आधार पर राज्य द्वारा नागरिकों के बीच कोई भेदभाव सर्वथा निषिद्ध किया गया है।

भारतीय पंथनिरपेक्षता के मूलतत्व:

1. राज्य का अपना कोई राजकीय धर्म (State Religion) नहीं है।
2. राज्य के दृष्टिकोण से सभी धर्म (Religion) समान हैं।
3. राज्य सभी पंथों को समान स्वतंत्रता एवं समान संरक्षण देगा।
4. राज्य पंथ के आधार पर अपने नागरिकों से भेदभाव नहीं करेगा।
5. राज्य नागरिकों को अपनी इच्छानुसार किसी पंथ को मानने तथा उसके अनुसार आचरण करने का अधिकार एवं स्वतंत्रता देता है।

पंथनिरपेक्षता को न्यायपालिका ने S.R. बोम्मई बनाम भारत संघ वाद-1994 में संविधान के मूल ढांचे का भाग माना है।

भारतीय पंथनिरपेक्षता एवं पाश्चात्य पंथनिरपेक्षता में अंतर:

क्र.सं.	भारतीय पंथनिरपेक्षता	पाश्चात्य पंथनिरपेक्षता
1.	राज्य सत्ता द्वारा विभिन्न धर्मों को समान संरक्षण, समान सम्मान, समान स्वतंत्रता एवं सहायता।	राज्य सत्ता का धर्म के प्रति उपेक्षा एवं उदासीनता का भाव। राज्य का धर्म से सरोकार नहीं है।
2.	रिलीजन की मानव के वैयक्तिक जीवन में वैधता की स्वीकृति।	मानव जीवन में वैज्ञानिक मनोवृत्ति को बढ़ावा देने का प्रयास।
3.	आशय सर्वधर्म समभाव से है अर्थात् सभी धर्मों का सम्मान, महत्व, सहअस्तित्व एवं परस्पर संवाद को महत्व।	तटस्थता एवं अलगाव का भाव।
4.	राज्य सत्ता धार्मिक मामलों में सकारात्मक एवं नकारात्मक रूप से हस्तक्षेप करता है। **i.** *सकारात्मक:* आर्थिक सहायता, समान संरक्षण, समान सम्मान एवं स्वतंत्रता, भूमि आवंटन, प्रबंधन में हस्तक्षेप, सब्सिडी आदि **ii.** *नकारात्मक:* सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता एवं स्वास्थ्य के आधार पर राज्य व्यक्ति की धार्मिक स्वतंत्रता पर युक्तिसंगत प्रतिबंध लगा सकता है, कानून बनाकर उनमें सुधार कर सकता है। *यहाँ यह उल्लेखनीय है कि भारत में राज्य धर्म के क्षेत्र में हस्तक्षेप तो करता है परन्तु धर्म के नाम पर कोई भेदभाव या पक्षपात नहीं करता है।*	राज्य सत्ता का धर्म से अलगाव, पृथक्कीकरण एवं अहस्तक्षेप की नीति। आशय है कि राज्य धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा। राज्य का धर्म से कोई सरोकार नहीं होगा। राज्य धर्मनिरपेक्षीकरण (Secularization) को बढ़ावा देगा।

समस्या:

1. पंथनिरपेक्षता भारतीय राजनीतिक शब्दावली का एक महत्वपूर्ण पक्ष है और संविधान की प्रस्तावना का भाग है फिर भी इस शब्द का निश्चित, स्पष्ट एवं सर्वमान्य अर्थ निर्धारित नहीं हो सका है।

2. राज्य के स्तर पर पंथनिरपेक्षता के आदर्श को माना गया है और व्यक्ति के स्तर पर धार्मिक स्वतंत्रता दी गयी है। परन्तु राज्य सत्ता का संचालन व्यक्तियों के द्वारा ही होता है। ऐसी स्थिति में राज्य के स्तर पर पंथनिरपेक्षता के सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक पक्ष को लेकर द्वन्द्व की स्थिति उत्पन्न होने लगती है।

सांप्रदायिकता (Communalism): अपने धर्म में निष्ठा रखना एवं धर्म के मूलभूत मूल्यों के अनुसार आचरण करना और धार्मिक गतिविधियों में संलग्न होना सांप्रदायिकता नहीं है। वस्तुत: सांप्रदायिकता एक राजनीतिक अभिमुख अवधारणा है जो केवल धार्मिक समुदाय को स्वीकार करती है। यह धार्मिकता या धर्म की राजनीतिक इच्छा-पूर्ति में रूपान्तरित स्थिति है, जिसमें राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए धर्म का गलत तरीके से प्रयोग किया जाता है। धर्म के मूलभूत नैतिक मूल्यों एवं सिद्धांतों को समसामयिक राजनीतिक सुविधाओं, लाभों एवं आवश्यकताओं के अनुसार तोड़-मरोड़ कर विकृत रूप से प्रस्तुत करना ही सांप्रदायिकता है। इसमें एक धार्मिक समुदाय का अन्य धार्मिक समुदायों से विद्वेष, प्रतिस्पर्धा और वैमनस्य पैदा की जाती है ताकि वह अन्य समुदायों को अपने शत्रु के रूप में समझने लगे। सांप्रदायिकता बहुजातीय, बहुधार्मिक, बहुभाषीय समुदायों की एकता के रूप में राष्ट्रवाद की अवधारणा का विरोध करती है। यह सामाजिक सांस्कृतिक सह-अस्तित्व के मानक के रूप में स्थापित पंथनिरपेक्षता के स्वरूप का विरोध करती है।

सामान्यत: एक साम्प्रदायिक व्यक्ति का दृष्टिकोण समाज-विरोधी होता है। उसको समाज-विरोधी इसलिए कहा जा सकता है क्योंकि वह अपने समूह के संकीर्ण हितों को पूरा करने के लिए अन्य समूहों के और सम्पूर्ण देश के भी हितों की अवहेलना करने में संकोच नहीं करता। इसमें किसी विशिष्ट धर्म के आधार पर किसी समूह विशेष के निहित स्वार्थ पर बल दिया जाता है एवं उन हितों को राष्ट्रीय हितों के ऊपर रखते हुए उस समूह में पृथकता की भावना उत्पन्न की जाती है।

1. सांप्रदायिकता विभिन्न वर्गों के बीच परस्पर द्वेष को बढ़ावा देती है। परिणामस्वरूप, आपस में अविश्वास, वैमनस्य एवं संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है। इससे सामाजिक सद्भाव एवं सामाजिक समरसता के ताने-बाने को चोट पहुंचती है। साम्प्रदायिक घटनाएँ देश की आंतरिक सुरक्षा के लिए भी गंभीर चुनौती हैं।
2. सांप्रदायिक दंगों की आग में झुलस कर समाज की अर्थव्यवस्था बुरी तरह आहत हो जाती है जिसका खामियाजा लंबी समयावधि तक पूरे समाज को भुगतना पड़ता है।
3. सांप्रदायिकता राजनीतिक व्यवस्था में अस्थिरता की परिस्थिति पैदा कर देती है जिसके नकारात्मक परिणाम काफी दूरगामी होते हैं।
4. भारत की बहुलवादी व्यवस्था एवं राष्ट्रीय एकता तथा अखंडता को अक्षुण्ण बनाए रखने में सांप्रदायिकता सदैव व्यवधान उत्पन्न करती रही है।

स्पष्ट है कि जहाँ पंथनिरपेक्षता राजनीति से धर्म को पृथक करने को इंगित करती है, वहीं साम्प्रदायिकता राजनीतिक हितपूर्ति के संदर्भ में धर्माधारित होकर आगे बढ़ती है। यह सामाजिक-सांस्कृतिक, सहअस्तित्व के मानक के रूप में स्थापित पंथनिरपेक्षता के स्वरूप का विरोध करती है।

भारत में सांप्रदायिकता के उद्‌भव का प्रमुख कारण स्वाधीनता से पहले भारत में अंग्रेजों द्वारा 'फूट डालो और राज करो' (divide and rule) की नीति रही है।

सामाजिक समस्या (Social Problem) : सामाजिक समस्या का आशय एक ऐसी स्थिति से लगाया जाता है जिससे समाज एक बड़ा भाग नकारात्मक रूप से प्रभावित होता है। सामाजिक समस्याओं का परिणाम हानिकारक होता है। इससे समाज संकट में पड़ता है ऐसी समस्याओं का समाधान सामूहिक रूप से सम्भव है। भारतीय समाज में ऐसी अनेकों समस्याएँ विद्यमान है जिससे समाज का बड़ा भाग प्रभावित होता है जैसे भ्रष्टाचार, सांप्रदायिकता, जाति-भेद, लिंग आधारित भेदभाव आदि।

धर्म का आशय (Meaning of Dharma) : यद्यपि लोक प्रचलित भाषा में 'रिलीजन' के लिये 'धर्म' शब्द रूढ़ हो गया है, परन्तु भारतीय संस्कृति में 'धर्म' का वह अर्थ नहीं लिया जाता जो अंग्रेजी में 'रिलीजन' शब्द का है। भारतीय संदर्भ में 'धर्म' पाश्चात्य संदर्भ में प्रचलित 'रिलीजन' से भिन्न है। भारतीय संदर्भ में धर्म को शाश्वत, सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों के रूप में देखा गया है। यहाँ धर्म का आशय नैतिकता, स्व-कर्त्तव्यपालन, सद्-आचरण, सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों आदि से है। धर्म में नैतिक मूल्यों के संरक्षण, नियमानुकूल सुखभोग, सामाजिक सदाचार एवं कर्त्तव्य-बोध का भाव निहित है। इसे हम निम्नलिखित तथ्य बिंदुओं में देख सकते हैं-

(1) भारतीय परम्परा में चार पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) माने गये हैं। यहाँ धर्म का आशय मूल्यपूर्ण जीवन से है।

(2) मनु ने धर्म के दस लक्षण बताए हैं, ये हैं- धैर्य, क्षमा, दम, अस्तेय, शुद्धि, इन्द्रिय-निग्रह, बुद्धि, विद्या, सत्य एवं अक्रोध।

"धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीर्विद्या सत्यम् अक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।" (मनु० स्मृति० 92)

(3) महाभारत में यह कहा गया है कि "धारणात् धर्मम् इत्याहुः धर्मो धारयते प्रजाः" अर्थात् जो व्यक्ति को, समाज को, जनसाधारण को धारण करे, वही धर्म है।

(4) गीता में कहा गया है कि-

"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्। धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।"
(4/7-8)

"जब-जब धर्म की हानि (मूल्यों का पतन, कर्त्तव्यों की उपेक्षा) होती है, और अधर्म (पाप कर्मों में लिप्तता) बढ़ता है, तब-तब मैं सज्जनों के कल्याणार्थ एवं दुर्जनों के विनाश के लिये अवतरित होता हूँ।"

(5) भर्तृहरि का कहना है कि- "धर्मविहीन मनुष्य पशु के समान है।"

(6) वैशेषिक दर्शन में यह कहा गया है कि जिससे भौतिक कल्याण और आध्यात्मिक उत्थान दोनों हों, वही धर्म है ("यतोऽभ्युदय निःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः")।

(7) तुलसीदास भी यह कहते हैं कि "परहित सरस धर्म नहिं भाई, पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।"

(8) 'आचारः परमो धर्मः' (नैतिक नियमों के अनुसार आचरण करना ही परम धर्म है), 'अहिंसा परमो धर्मः' (अहिंसा सबसे उत्तम धर्म है), 'नहि सत्यात् परोधर्मः' (सत्य के समान दूसरा धर्म नहीं है) 'धर्मराज युधिष्ठिर' इत्यादि संदर्भ भी धर्म के नैतिक एवं मूल्यात्मक पक्ष को ही इंगित करते हैं।

(9) गाँधी भी धर्मयुक्त राजनीति की बात करते हैं। उनके अनुसार- "धर्मविहीन राजनीति नितान्त निंदनीय है।" यहाँ धर्म का आशय नैतिक मूल्यों से है।

उपरोक्त विवरणों से स्पष्ट है कि 'धर्म' शब्द रिलीजन के अर्थ में स्वीकृत न होकर मूल्य, कर्त्तव्य आदि रूपों में वर्णित है। धर्म न तो किसी विशेष दैवीय शक्ति के प्रति प्रतिबद्ध है और न ही वह किसी मजहबी संगठन के घेरे में बन्द है। यही कारण है कि जब पाश्चात्य अवधारणा ***'सेक्यूलरिज्म'* (Secularism)** का भारतीय संविधान की प्रस्तावना में हिन्दी रूपान्तरण किया गया तब इसके विकल्प के रूप में ***'पंथ-निरपेक्षता'*** शब्द का प्रयोग किया गया, धर्म-निरपेक्षता शब्द का नहीं, क्योंकि भारतीय संदर्भ में 'धर्म' के अर्थ को ध्यान में रखकर धर्म से निरपेक्ष या तटस्थ नहीं हुआ जा सकता।

स्पष्ट है कि 'धर्म' की अवधारणा परम्परागत पाश्चात्य दार्शनिकों द्वारा स्वीकृत 'रिलीजन' की तुलना में अधिक व्यापक है। 'रिलीजन' की अवधारणा में प्रधानतः अलौकिक ईश्वर तथा उसके प्रति मनुष्य की उपासना, प्रार्थना आदि पर बल है। धर्म की अवधारणा में नैतिक मूल्य, सदाचार एवं स्वकर्त्तव्य पालन का भाव प्रधान रूप से समाहित हो जाता है। इसलिए भारतीय परम्परा में जैन, बौद्ध आदि को 'धर्म' कहने में किसी प्रकार की कोई समस्या उत्पन्न नहीं होती।

बहुसंस्कृतिवाद (Multi-Culturalism) : बहुसंस्कृतिवाद एक ऐसी अवधारणा है जो विभिन्न सांस्कृतिक पहचानों को सुरक्षित रखते हुए सांस्कृतिक विविधता का संरक्षण एवं प्रोत्साहन करती है। स्पष्ट है कि इस अवधारणा में विभिन्न संस्कृतियों के सह-अस्तित्व व संरक्षण के साथ-साथ सहसंपन्नता का भाव विद्यमान है। बहुसंस्कृतिवाद का यह मानना है कि प्रत्येक संस्कृति में विशिष्ट मूल्य होते हैं। ऐसी स्थिति में एक संस्कृति को दूसरी संस्कृति के मूल्यों के आधार पर नहीं समझा जा सकता। प्रत्येक संस्कृति एक अतुलनीय इकाई है। बहुसंस्कृतिवाद सांस्कृतिक विविधता को एक पोषणकारी मूल्य मानता है। यह समाज में इसका संरक्षण एवं प्रोत्साहन चाहता है। इसमें अल्पसंख्यक सांस्कृतिक समुदायों के प्रति भेदभाव को न्यूनतम करने का भाव विद्यमान है।

लाभ या वरदान क्यों :

1. अनेक संस्कृतियों की उपस्थिति हमारे जीवन एवं समाज को समृद्ध बनाती है। इससे सामाजिक गतिविधियों में जीवंतता बनी रहती है। भिन्न-भिन्न संस्कृतियाँ हमें भिन्न-भिन्न जीवन पद्धतियाँ एवं सोचने का ढंग प्रदान करती हैं।
2. विभिन्न संस्कृतियों की उपस्थिति से हमारा दृष्टिकोण व्यापक बनता है, जागरूकता आती है तथा समस्याओं को व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखने का दृष्टिकोण पैदा होता है। इससे व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास में मदद मिलती है।
3. बहुसंस्कृतिवाद की अवधारणा को बढ़ावा देने पर अल्पसंख्यक संस्कृतियों में राज्य के प्रति विरोध का भाव समाप्त होता है और इससे उनमें आत्मसम्मान, आत्मगौरव का भाव उत्पन्न होता है।

सामाजिक न्याय: इसका अभिप्राय है कि संगठित सामाजिक जीवन एवं सामाजिक विकास का लाभ कुछ गिने-चुने लोगों को न मिले बल्कि सर्वसाधारण को विशेषत: निर्बल, निर्धन, उपेक्षित एवं शोषित साधनविहीन वर्गों को उनमें समुचित हिस्सा मिले ताकि उनके जीवन स्तर में सुधार हो तथा वे भी सामान्यत: सुखी एवं सम्मानित जीवन व्यतीत कर सकें। कमजोर वर्गों को ये लाभ किसी दया या कृपा के रूप में नहीं बल्कि अधिकार के रूप में प्राप्त होने चाहिए। सामाजिक न्याय की अवधारणा में सभी लोगों की मूलभूत आवश्यकताओं जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, संचार, सामाजिक सुरक्षा आदि की उपलब्धता का भाव समाहित है। सामाजिक न्याय की मांग है कि समाज में जन्म, मूलवंश, जाति, धर्म, लिंग परम्परा या उत्तराधिकारी के आधार पर सामाजिक भेदभाव व विषमता न रहे, कमजोर एवं पिछड़ों को भय, अन्याय एवं शोषण से मुक्ति मिले, उन्हें विकास के पर्याप्त अवसर मिलें। अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, सामाजिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों, आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों (EWS) एवं स्त्रियों की उन्नति के लिए विशेष प्रावधान किए जाएं। भारत के संविधान की प्रस्तावना, मौलिक अधिकार, नीति-निर्देशक तत्व एवं संविधान के भाग 16 में सामाजिक न्याय संबंधी प्रावधान है। जॉन रॉल्स प्राथमिक सामाजिक वस्तुओं का निष्पक्ष प्रक्रिया के माध्यम से, जनसाधारण में वितरण को सामाजिक न्याय के रूप में स्वीकार करते हैं।

सामाजिक असंतुलन को दूर करने में सामाजिक न्याय सहायक है।

आर्थिक न्याय: आर्थिक न्याय का लक्ष्य आर्थिक लोकतंत्र एवं कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना है। सब लोगों की न्यूनतम आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो तथा वंचित एवं उपेक्षित लोगों के जीवन को बेहतर बनाने का विशेष प्रयास हो। निजी सम्पत्ति लोगों के शोषण का साधन न बने। उत्पादन के साधनों तक सबकी पहुँच समान रूप से हो तथा बिना किसी भेदभाव के सभी को आगे बढ़ने का समान आर्थिक अवसर मिले। गाँधी ने आर्थिक न्याय की स्थापना के लिए ट्रस्टीशिप का सिद्धांत प्रस्तुत किया था।

राजनीतिक न्याय: इससे तात्पर्य है कि बिना किसी भेदभाव के सभी नागरिकों को राजनीतिक प्रक्रिया में भाग लेने का अधिकार मिले। कानून का शासन, नागरिक स्वतंत्रताएं, सार्वभौम वयस्क मताधिकार,

जनतांत्रिक संस्थाएं आदि राजनैतिक न्याय की आवश्यक शर्तें हैं। राजनैतिक न्याय की मांग है कि नागरिक अपने हितों व इच्छाओं को अभिव्यक्त कर सकें तथा अपने हितों का हनन करने वाली शासकीय नीतियों के विरूद्ध शांतिपूर्ण प्रदर्शन कर सकें तथा जनतांत्रिक प्रणाली के माध्यम से शासन के कार्य को प्रभावित कर सकें। राजनीतिक न्याय की अवधारणा समाज में समानता, स्वतंत्रता एवं न्याय की मांग करती है।

स्वतंत्रता (Freedom): मानव व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिए स्वतंत्रता का होना आवश्यक है। प्रस्तावना में सभी नागरिकों को विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता देने का भाव प्रकट किया गया है। स्पष्ट है कि यहां धर्म और उपासना को नागरिकों की निजी आस्था का विषय माना गया है। यह सरकार के द्वारा आरोपित नहीं है। इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु संविधान के भाग-3 के अनुच्छेद-19(1)(क) और अनुच्छेद-25 से लेकर अनुच्छेद-28 तक में इन स्वतंत्रताओं को मूल अधिकार के रूप में मान्यता दी गयी है।

समानता (Equality): प्रतिष्ठा और अवसर की समानता प्रस्तावना का एक अन्य महत्वपूर्ण लक्ष्य है। मनुष्यों में बुद्धि, रूप, रंग, आयु, लिंग आदि के आधार पर प्राकृतिक रूप से कुछ अन्तर पाया जाता है। समानता की मांग है कि इनके आधार पर भेदभाव नहीं किया जाए। भारतीय संविधान के अनुच्छेद-14 से लेकर अनुच्छेद-18 तक में समानता के अधिकार का प्रावधान है। अनुच्छेद-14 में कानून के समक्ष समानता और विधियों के समान संरक्षण की व्यवस्था की गई है। अनुच्छेद-15 में धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान आदि के आधार पर विभेद का प्रतिषेध किया गया है। अनुच्छेद-16 में सरकारी नौकरियों में सभी को समान अवसर देने और अनुच्छेद-17 में छुआछूत खत्म करने का प्रावधान किया गया है। कानून की दृष्टि में प्रत्येक नागरिक की हैसियत समान है और किसी को भी एक दूसरे के मुकाबले में कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं है।

व्यक्ति की गरिमा, राष्ट्र की एकता एवं अखण्डता तथा बंधुत्व
(Dignity of the individual, unity and integrity of the nation and fraternity) :

42वें संविधान संशोधन के द्वारा **'अखण्डता'** शब्द को प्रस्तावना में जोड़ा गया ताकि पृथकतावादी प्रवृत्तियों को रोका जा सके। इसका आशय है- भू-भागीय एकता (Territorial unity) अर्थात् देश के विभिन्न क्षेत्र एवं प्रान्त एक-दूसरे से जुड़े रहें, वे देश से अलग न होने पायें। उल्लेखनीय है कि अतीत में भारतीय संघ के कुछ राज्यों एवं संगठनों द्वारा संघ से अलग होकर पृथक प्रभुता सम्पन्न राज्य बनाने की मांग उठायी जा चुकी है। अखण्डता की अवधारणा संविधान की संघात्मक प्रवृत्ति में ही निहित है। अनुच्छेद (1) में यह कहा गया है कि भारत राज्यों का एक संघ होगा। इसमें यह भाव सन्निहित है कि भारतीय संघ के किसी भी राज्य को अलग होने का अधिकार नहीं है। इसीलिए अनुच्छेद (19) के अंतर्गत राज्य को नागरिकों की स्वतंत्रताओं पर देश की अखण्डता के आधार पर युक्तियुक्त निर्बन्धन लगाने की शक्ति प्राप्त है। मूल कर्त्तव्यों में भी यह माना गया है कि प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य है कि भारत की प्रभुत्ता, एकता और अखण्डता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण बनाये रखे।

एकता (Unity): एकता शब्द का आशय है कि देश के विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले लोग आपस में मिल-जुल कर रहें, उनमें परस्पर सह-अस्तित्व, सहयोग एवं सामंजस्य का भाव हो। इसके लिए आवश्यक है कि व्यक्ति की गरिमा की रक्षा हो और प्रत्येक नागरिक को अधिकार एवं सुविधाएँ समान रूप से दी जाएँ।

गरिमा (Dignity): गरिमा शब्द के अंतर्गत राज्य का व्यक्ति के प्रति कर्त्तव्य और व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा का भाव विद्यमान है। राज्य ऐसी परिस्थितियों को सृजन करें कि लोगों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति होने के साथ-साथ उन्हें स्वतंत्रतापूर्वक अपना विकास करने का अवसर प्राप्त हो।

बंधुत्व (Fraternity): इसे व्यक्ति की गरिमा तथा राष्ट्र की एकता-अखण्डता को सुनिश्चित करने वाले सिद्धांत के रूप में संविधान का लक्ष्य घोषित किया गया है। बंधुत्व की अवधारणा यह मांग करती है कि एक ही भारत माता की संतान होने के कारण सभी नागरिकों में भाईचारे की भावना

का होना आवश्यक है। बंधुत्व संघर्ष के स्थान पर समरसता एवं सहयोग पर बल देकर व्यक्तित्व के उदात्त मानवीय पक्षों को उभारता है तथा राष्ट्र निर्माण को सुगम बनाता है। बंधुत्व की अवधारणा समाज के गरीब एवं वंचित वर्ग के प्रति हमारे उत्तरदायित्व का बोध कराती है। लोक प्रशासकों में सेवा की भावना एवं सिविल सेवा के प्रति समर्पण भाव को बढ़ाने में बंधुत्व की अवधारणा सहायक है।

गणतंत्र (Republic): गणतंत्र से तात्पर्य है कि राज्य का अध्यक्ष वंशानुगत या मनोनीत न होकर एक निश्चित अवधि के लिए निर्वाचित होता है। भारत का राज्याध्यक्ष अर्थात् राष्ट्रपति जनता के द्व ारा अप्रत्यक्ष रूप से चुना गया प्रतिनिधि होता है। भारत का राष्ट्रपति एक निश्चित अवधि के लिए चुना जाता है। देश की समस्त कार्यपालिका शक्ति राष्ट्रपति में निहित होती है परन्तु वह उसका प्रयोग मंत्रिमण्डल के परामर्श से करता है, जिसका प्रधान प्रधानमंत्री होता है। 26 जनवरी, 1950 से भारत एक गणराज्य है अर्थात् अब यहाँ वंशानुगत शासन प्रणाली का अंत कर दिया गया है। राज्य के राज्याध्यक्ष का पद अब वंश परम्परा अथवा रक्त संबंध पर आधारित ना होकर जनता द्वारा दिये गए जनादेश पर आधारित है। इसी को ध्यान में रखते हुए वर्ष 1951 में पहला आम चुनाव निर्धारित किया गया।

धर्मनिरपेक्षीकरण/लौकिकीकरण (Secularization): यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें किसी समाज के सदस्यों के विचार एवं व्यवहार के निर्धारण हेतु धार्मिक मान्यताओं, विश्वासों, प्रतीकों एवं संस्थाओं की अपेक्षा बौद्धिक एवं तार्किक विश्लेषण को अधिक महत्व दिया जाता है। यह प्रक्रिया समाज को विवेकी बनाती है और दैनिक जीवन में धार्मिक सिद्धांतों एवं धार्मिक नियंत्रण के स्थान पर तर्क सम्मत व्यवहार को प्रतिस्थापित करती है। लौकिकीकरण आधुनिकीकरण की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। इसमें धर्मनिरपेक्ष नैतिकता (Secular Morality) का भाव समाहित है।

समान नागरिक संहिता (Uniform Civil Code): राज्य के नीति-निर्देशक तत्व के अंतर्गत अनुच्छेद-44 में उद्धृत जिसमें समाज में निवासित सभी समुदायों की जीवन-पद्धति के लिए एक समान नियमों की व्यवस्था किया जाना है। जैसे– विवाह, विवाह-विच्छेद, गोद लेना, संपत्ति पर अधिकार आदि।

जनहित या सार्वजनिक हित (Common Good): सार्वजनिक हित या सामान्य हित का आशय वैसे हितों से है जो पूरे समुदाय या मानव जाति के कल्याण के सरोकार से संबंधित होते हैं। इसमें किसी वर्ग, दल या गुट-विशेष के हितों को वरीयता नहीं दी जाती है, जैसे- देश की रक्षा, कानून और व्यवस्था, जन-स्वास्थ्य (जैसे- कोविड का टीका), शिक्षा, पर्यावरण संरक्षण, स्वच्छता अभियान आदि के उपाय जनहित को ध्यान में रखकर ही संपादित किए जाते हैं।

कभी-कभी जनहित के उपायों को भी किसी वर्ग विशेष के पक्ष या विपक्ष से जोड़कर संघर्ष और विवाद पैदा करने का प्रयास समाज में किया जाता है।

सामूहिक उत्तरदायित्व (Collective Responsibility): इसका अर्थ है– सरकार के किसी भी निर्णय के लिए पूरा मंत्रिमंडल सामूहिक रूप से उत्तरदायी होता है। यदि सरकार का कोई निर्णय गलत सिद्ध होता है तो विधानमंडल उसके विरुद्ध अविश्वास-प्रस्ताव पारित कर सकता है जिससे पूरे मंत्रिमंडल को एक-साथ त्यागपत्र देना पड़ता है।

पंचशील (Panchsheel): पंचशील का शाब्दिक अर्थ है- पांच प्रकार के नैतिक आचरण। बुद्ध का पंचशील व्यक्तियों के आचरण के नियमन से संबंधित था- जैसे- किसी प्राणी को हानि नहीं पहुंचाना, जो चीज न दी गई हो उसे न लेना, झूठ नहीं बोलना आदि। आधुनिक युग में इस नाम से अंतर्राष्ट्रीय आचरण के पांच नैतिक नियम भारत के प्रथम प्रधान मंत्री जवाहरलाल नेहरू (1889-1964) की प्रेरणा से 1954 के भारत-चीन समझौते के अंतर्गत प्रस्तुत किए गए थे :

1. एक-दूसरे की प्रादेशिक अखंडता का परस्पर सम्मान;
2. एक दूसरे के विरुद्ध आक्रामक कार्यवाही न करना;
3. एक-दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करना;
4. समानता और परस्पर लाभ; और
5. शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व (Peaceful Co-existence).

राजनीतिक संस्कृति (Political Culture) : राजनीतिक संस्कृति का अर्थ है- किसी समाज की संस्कृति के वे पक्ष जो उसकी राजनीति को प्रभावित करते हैं। राजनीतिक संस्कृति में मुख्यतः उस राष्ट्र के ऐसे मूल्यों, विश्वासों एवं मानकों को सम्मिलित किया जाता है, जो शासक वर्ग, शासन प्रणाली और शासन प्रक्रिया को वैधता प्रदान करते हैं और इसके संदर्भ में व्यक्ति की स्थिति को निर्धारित करते हैं। यह संकल्पना राजनीति को संस्कृति के दृष्टिकोण से देखती है। संस्कृति को राजनीति के दृष्टिकोण से नहीं देखती है।

सामाजिक सेवाएं (Social Services): ऐसी सेवाएं जो नागरिकों के जीवन स्तर (Quality of Life) को उन्नत करने के लिए राज्य की ओर से जुटाई जाती हैं। इनमें उन सेवाओं का विशेष स्थान है जिनका प्रबंध निर्धन और निर्बल वर्गों के हित में किया जाता है, जैसे कि असहाय बच्चों, बूढ़ों और स्त्रियों की स्वास्थ्य, रक्षा तथा जनसाधारण के लिए सस्ती शिक्षा, परिवहन, मनोरंजन इत्यादि की यथेष्ट व्यवस्था।

साम्राज्यवाद (Imperialism) :- ऐसी प्रक्रिया जिसके तहत कोई राष्ट्र अपनी सैन्य, राजनीतिक, आर्थिक आदि शक्तियों का प्रयोग कर अपने नियंत्रण में आने वाले क्षेत्र का विस्तार करता है।

उपनिवेशवाद (Colonialism) :- उपनिवेशवाद साम्राज्यवाद का ही एक रूप है। इस नीति के तहत कोई विदेशी शक्ति अन्य प्रदेशों पर अपना राजनीतिक आधिपत्य स्थापित कर अपनी आर्थिक शक्ति की वृद्धि के लिए उसके संसाधनों का प्रयोग करता है। आधुनिक विश्व में पश्चिमी देशों मुख्यतः ब्रिटेन, फ्रांस, स्पेन आदि ने एशिया व अफ्रीका के देशों में अपने उपनिवेश स्थापित किये।

नव-उपनिवेशवाद (Neo Colonialism): नव-उपनिवेशवाद (Neo colonialism) या आर्थिक उपनिवेशवाद (Economic colonialism) उपनिवेशवाद का नया रूप है। इसमें उपनिवेशवादी राष्ट्र किसी देश में अपना राजनीतिक आधिपत्य कायम नहीं करता बल्कि उसे आर्थिक (Economic) व तकनीकी (Technology) दृष्टि से अपना आश्रित बना लेता है। नव उपनिवेशवाद में उपनिवेशवादी राष्ट्र दूसरे राष्ट्र में अपनी मनपसंद की कठपुतली सरकार का गठन कर भी उस देश से अपना फायदा उठाता रहता है।

कूटनीति/राजनय (Diplomacy) : किसी देश के द्वारा किसी अन्य देश के साथ परस्पर संबंध संचालित करने की विधि और उससे जुड़ी प्रथाएं कूटनीति कहलाती हैं। कोई दो राष्ट्र जब राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, सामरिक आदि आधार पर आपस में संबंध स्थापित करते हैं तो उसे कूटनीतिक संबंध (Diplomatic Relation) कहते हैं। इसके लिए जिन देशों से कूटनीतिक संबंध है वहां दूतावास स्थापित किए जाते हैं।

'Diplomacy' के लिए पारंपारिक रूप में 'कूटनीति' शब्द का प्रयोग किया जाता है लेकिन इससे छल-कपट व षड्यंत्र की गंध आती है, अतः Diplomacy के लिए अब सामान्यतः 'राजनय' शब्द प्रयुक्त होता है।

बहुसंस्कृतिवाद (Multiculturalism) यह एक ऐसी अवधारणा है जो-

1. विभिन्न सांस्कृतिक पहचानों को सुरक्षित रखने का प्रयास करती है।
2. सांस्कृतिक विविधता का रक्षण एवं प्रोत्साहन, विभिन्न संस्कृतियों के मध्य संहअस्तित्व के साथ-साथ सहसम्पन्नता पर बल देती है।
3. अल्पसंख्यक सांस्कृतिक समुदायों के प्रति भेदभाव न्यूनतम करने का प्रयास या विशेष संरक्षण देने की वकालत करती है।

लोकतंत्र (Democracy): व्यापक दृष्टिकोण से लोकतंत्र केवल एक शासन प्रणाली (जनता का, जनता के द्वारा और जनता के लिए शासन) ही नहीं है बल्कि सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक प्रणाली भी है। अपने व्यापक अर्थ में लोकतंत्र मूल्यों की एक अवस्था है जिसमें स्वतंत्रता, समानता, न्याय, बंधुत्व, सहिष्णुता, शांतिपूर्ण सहअस्तित्व, उदारता, वसुधैव कुटुम्बकम, सहनशीलता जैसे मूल्यों को सम्मिलित किया जाता है। अपने व्यापक रूप में लोकतंत्र एक जीवन पद्धति बन जाता है। इसका आशय है कि

सिद्धांत और व्यवहार दोनों में लोकतंत्र को जीवन का अंग बना लेना अर्थात् हमारा सम्पूर्ण जीवन लोकतांत्रिक मूल्यों से मुक्त हो तथा निर्णयों एवं कार्यों में उसकी अभिव्यक्ति हो। अपने व्यापक रूप में लोकतंत्र साध्य बन जाता है।

यहाँ सांस्कृतिक लोकतंत्र का आशय है कि समाज में बहुलवाद, सहिष्णुता, शांतिपूर्ण सहअस्तित्व, दूसरों के विचारों का आदर एवं सम्मान तथा सहनशीलता आदि का भाव विद्यमान है।

इस प्रकार व्यापक अर्थ में लोकतंत्र सिद्धांत के साथ-साथ व्यवहारिक स्तर पर उसके अनुरूप निर्णय एवं कार्य प्रक्रिया को दर्शाता है।

सहभागी लोकतंत्र (Participatory Democracy): सहभागी लोकतंत्र का आशय है- नीति-निर्माण प्रक्रिया एवं क्रियान्वयन में जनसाधारण की भागीदारी। व्यक्ति की स्वतंत्रता एवं उसके व्यक्तित्व का विकास तभी चरितार्थ हो सकता है यदि उसे राज्य के कार्यों में भागीदारी का अवसर मिले। लोकतंत्र का सार सहभागिता में है।

लाभ: मानव के विकास में सहायक, राजनीतिक कार्य-कुशलता को बढ़ावा, शासक एवं शासितों के अलगाव में कमी, सामाजिक समस्याओं के बारे में चिन्ता, जागरुकता एवं निवारण हेतु सक्रियता, समुदायिक एकता की सुदृढ़ भावना, आधुनिक जीवन-शैली के तनावों को कम करने में सहायक, सामाजिक पूँजी का निर्माण। सरकार की नीतियों एवं योजनाओं के त्वरित एवं प्रभावी क्रियान्वयन में असानी, जन-केन्द्रित शासन की स्थापना में सहायक।

स्थानीय स्वशासन पद्धति (Local Self Goverment System): स्थानीय स्वशासन का तात्पर्य है- स्थानीय लोगों की भागीदारी द्वारा स्थानीय शासन की व्यवस्था सुचारू रूप से करना इसमें स्थानीय लोगों की समस्या के समाधान में स्थानीय संस्थाओं की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद-40 के अनुसार 'राज्य, ग्राम पंचायतों का गठन करने के लिए कदम उठाएगा और उनको ऐसी शक्तियां और प्राधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक हों।'' 73 वें तथा 74वें संविधान संशोधन ने पंचायती राज तथा नगरपालिकाओं को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया है।

व्यापार युद्ध (Trade War) : जब दो या उससे ज्यादा देश बदले की भावना से एक-दूसरे के लिए व्यापार में अड़चने पैदा करते हैं तो उसे व्यापार युद्ध *(Trade War)* कहा जाता है। इसके लिए एक देश, दूसरे देश से आने वाले सामान पर कर *(Tariff/Tax)* लगा देता है या उसे बढ़ा देता है। इससे आयात होने वाली चीजों की कीमत बढ़ जाती है, जिससे वे घरेलू बाजार में प्रतिस्पर्धा नहीं कर पाती। इससे उनकी बिक्री घट जाती है।

परमाणु अप्रसार (Nuclear Non-proliferation): परमाणु हथियारों का प्रसार पाँच परमाणु शक्ति संपन्न देशों के अलावा अन्य देशों में प्रसार पर प्रतिबंध है। अतः परमाणु अप्रसार क्षैतिज है, ऊर्ध्वाधर नहीं। क्योंकि पाँच परमाणु शक्ति संपन्न राज्य अपने परमाणु हथियारों को बनाये रखने के लिए स्वतंत्र हैं। इसलिए भारत ने अप्रसार के बजाय, सदैव नि:शस्त्रीकरण का समर्थन किया है, क्योंकि इस अप्रसार द्वारा कुछ राज्यों का विशेषाधिकार स्थापित हो जाता है।

उदारीकरण (Liberalisation): अर्थव्यवस्था में सरकारी हस्तक्षेप को कम करना, निजी क्षेत्र की भूमिका को बढ़ाना, मौद्रिक तथा वित्तीय नीति को ढीला करना, उद्योगों के निजीकरण पर बल देना, सामाजिक क्षेत्र में सरकारी खर्च में कटौती करना आदि। इसे ही आर्थिक उदारीकरण के नाम से जाना जाता है। उदारीकरण एक ऐसी प्रक्रिया या कार्यवाही है जिसके अंतर्गत आर्थिक गतिविधि की कार्यकुशलता (Efficiency) और उससे मिलने वाले लाभ (Profit) की अधिकतम वृद्धि के लिए उस पर से सरकारी प्रतिबंध (Restrictions) और नियंत्रण (Controls) हटा दिए जाते हैं, या उनमें ढील दे दी जाती है ताकि बाजार की शक्तियों (Market Forces) को बेरोक-टोक काम करने दिया जाए। इसके साथ यह विश्वास

जुड़ा है कि आर्थिक गतिविधि में कार्यकुशलता बढ़ाने के लिए मांग और पूर्ति (Demand and Supply) तथा मुक्त प्रतिस्पर्धा (Free Competition) के नियम को काम करने देना चाहिए; साथ ही व्यापारियों के लिए निजी लाभ (Private Profit) और कामगारों के लिए प्रोत्साहनों (Incentives) की विस्तृत गुंजाइश रखनी चाहिए।

इस नीति के अंतर्गत व्यक्तियों के कल्याण (Welfare) के लिए राज्य के उत्तरदायित्व को कम करने की कोशिश की जाती है। उदारीकरण के समर्थक यह मानते हैं कि राज्य की कल्याणकारी गतिविधियों को बढ़ाने से व्यक्ति स्वयं परिश्रम से विमुख हो जाते हैं और राज्य के ससाधनों पर भी जरूरत से ज्यादा बोझ पड़ता है। फिर, जो लोग अपनी सूझ-बूझ और कठिन परिश्रम के बल पर राज्य की समृद्धि को बढ़ाते हैं, उन पर करों का बोझ बहुत बढ़ जाता है और वे भी परिश्रम से विमुख हो सकते हैं। अत: सब तरह के लोगों को परिश्रम की ओर प्रेरित करने के लिए राज्य की कल्याणकारी सेवाओं को सीमित करना जरूरी है।

निजीकरण (Privatisation): संकुचित अर्थ में निजीकरण ऐसी आर्थिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा सरकारी क्षेत्र के किसी उपक्रम या औद्योगिक इकाई के स्वामित्व को पूर्णत: या अंशत: निजी स्वामित्व तथा नियंत्रण में लाया जाता है या निजी क्षेत्र को हस्तान्तरित किया जाता है। इसके अंतर्गत किन्हीं विशेष वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन या वितरण को सरकारी या सार्वजनिक क्षेत्र (Public Sector) के स्वामित्व और नियंत्रण (Ownership and Control) को हटाकर निजी या गैर-सरकारी क्षेत्र (Private Sector) को उसका स्वामित्व या नियंत्रण प्राप्त करने की अनुमति दी जाती है ताकि उसकी कार्यकुशलता बढ़ायी जा सके, उससे होने वाली वित्तीय हानि को रोका जा सके। व्यापक अर्थ में अर्थव्यवस्था में निजीकरण से तात्पर्य विभिन्न आर्थिक गतिविधियों में निजी क्षेत्र की भूमिका में उत्तरोत्तर वृद्धि से है। जैसे सार्वजनिक क्षेत्र के लिए आरक्षित उद्योगों को निजी क्षेत्र के लिए खोल देना, देश के आर्थिक क्रियाकलापों में सरकार की भागीदारी को कम करना, वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन एवं वितरण में निजी क्षेत्र की भागीदारी में वृद्धि करना सम्मिलित है।

वैश्वीकरण/भूमंडलीकरण (Globlisation): वैश्वीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यापार अवरोधकों (Trade Barriers) को कम कर या दूर कर विश्व की विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं का समन्वय किया जाता है ताकि विभिन्न देशों में वस्तुओं एवं सेवाओं का बेरोक-टोक आदान-प्रदान हो सके। इस प्रक्रिया में ऐसा वातावरण विकसित किया जाता है ताकि प्रौद्योगिकी (तकनीक), वस्तुओं, पूंजी, आँकड़ों, विचारों और श्रम या मानवीय पूंजी का विभिन्न देशों में निर्बाध प्रवाह हो सके। इससे व्यापार अवसरों का विस्तार होता है तथा व्यापार देश की सीमाओं तक सीमित न होकर विश्व व्यापार में निहित तुलनात्मक लाभ दशाओं का दोहन करने की दिशा मे आगे बढ़ता है। इस रूप में विश्व के विभिन्न देशों के मध्य दूरियों एवं बाधाओं का कम होना, सिमट जाना, एकाकार हो जाना ही वैश्वीकरण है।

वैश्वीकरण की प्रक्रिया में राज्य के नियंत्रण व संरक्षणवादी उपायों से हटकर – 'व्यक्ति, विचार, और वस्तुओं के त्वरित प्रवाह' को सुगम बनाया जाता है। भूमण्डलीकरण का शाब्दिक अर्थ- स्थानीय या क्षेत्रीय वस्तुओं या घटनाओं के विश्व स्तर पर रूपांतरण की प्रक्रिया है। इसे एक ऐसी प्रक्रिया का वर्णन करने के लिए भी प्रयुक्त किया जा सकता है जिसके द्वारा पूरे विश्व के लोग मिलकर एक समाज बनाते हैं तथा एक साथ कार्य करते हैं। यह प्रक्रिया आर्थिक, तकनीकी, सामाजिक और राजनीतिक ताकतों का एक संयोजन है। वैश्वीकरण का उपयोग अक्सर आर्थिक वैश्वीकरण के संदर्भ में किया जाता है, अर्थात, व्यापार, विदेशी प्रत्यक्ष निवेश, पूंजी प्रवाह, प्रवास और प्रौद्योगिकी के प्रसार के माध्यम से राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं में एकीकरण।

संक्षेप में विश्व में वस्तु, वित्त और सेवाओं के मुक्त आदान-प्रदान को ही भू-मंडलीकरण कहा जाता है। यह एक देश की विश्व अर्थव्यवस्था के साथ एकीकरण है। सूचना क्रांति ने विश्व को एक

गाँव बना दिया है।

लेटरल एंट्री (Lateral Entry): लेटरल एंट्री का आशय है- निजी क्षेत्र में बेहतरीन प्रदर्शन करने वाले कुशल, क्षेत्र विशेष के विशेषज्ञों को केन्द्र सरकार के विभिन्न मंत्रालयों एवं विभागों में संयुक्त सचिव (Joint Seceratary) या निदेशक (Director) के पद पर साक्षात्कार के माध्यम से निर्धारित अवधि के अनुबंध के जरिये नियुक्ति। सरकार वैसे विशेषज्ञों को सरकारी तंत्र में प्रवेश देने का प्रयोग कर रही है जो यूपीएससी की परीक्षाओं से चुनकर नहीं आये हैं।

लाभ:

1. प्रशासन को अधिक प्रभावी, कुशल, गुणवत्तापूर्ण एवं परिणामोन्मुखी बनाने में मददगार।
2. विशेषज्ञता का लाभ।
3. नवाचार एवं निर्णय प्रक्रिया में तेजी ।
4. अधिकारियों की कमी के कारण सरकारी कार्यों में उत्पन्न बाधा दूर।

समस्या:

1. लेटरल एंट्री में मानक चयन प्रक्रिया के अभाव के कारण पारदर्शिता को लेकर चिंता।
2. नौकरशाही में राजनीतिक पक्षपात को बढ़ावा मिल सकता है। (नौकरशाही का राजनीतिकरण)
3. आरक्षण की अवधारणा पर भी प्रहार।
4. निजी क्षेत्रों में कार्यरत विशेषज्ञ पेशवरों को सरकारी मंत्रालयों में नियुक्त करने पर हितों के टकराव को बढ़ावा।

KHAN GLOBAL STUDIES Most Trusted Learning Platform KHAN SIR